देश-प्रेमी। शुभकर्मकारी। प्रण-निबाहनेहार। शुद्ध व्यवहार। भारत-भूमि का उद्धार।

३. इस पाठ में भगवान से किन-किन बातों की प्रार्थना की गयी है?

४. भारत का उद्धार कैसे हो सकता है? तुममें किन-किन गुणों की आवश्यकता है, जिससे तुम देश-सेवा में सफल हो सको?

५. यह प्रार्थना याद करके सुनाओ।

२—मर्यादा की रक्षा

[इस कहानी के लेखक श्रीप्रेमचन्द हैं। यह उनका उपनाम है। वास्तव में इनका नाम धनपतराय था। उनका जन्म काशी के पास मढ़वा गाँव में संवत् १९३७ में और अन्त काशी में ८ अक्टूबर, सन् १९३६ को हुआ। बाबू धनपतराय बी० ए०, सी० टी० पहले सब-डिप्टी इंस्पेक्टर आफ़ स्कूल्स और बाद में गोरखपुर नार्मल स्कूल में अध्यापक थे। सन् १९२१ के असहयोग-आन्दोलन में उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ दी थी। वे उर्दू और हिन्दी के आजकल के सब से प्रसिद्ध और मान्य कहानी एवं उपन्यास लेखक थे। अपने साहित्यिक जीवन के आरम्भ में उन्होंने 'नवाबराय' उपनाम से भी उर्दू में कुछ कहानियाँ लिखी थीं। उनकी रचनाओं में ग्रामीण लोगों के विचारों और कामों का वास्तविक चित्रण मिलता है। उनकी भाषा सीधी-सादी, मुहावरों से सजी

देश-प्रेमी। शुभकर्मकारी। प्रण-निबाहनहार। शुद्ध व्यवहार। भारत-भूमि का उद्धार।

३. इस पाठ में भगवान से किन-किन बातों की प्रार्थना की गयी है?

४. भारत का उद्धार कैसे हो सकता है? तुममें किन-किन गुणों की आवश्यकता है, जिससे तुम देश-सेवा में सफल हो सको?

५. यह प्रार्थना याद करके सुनाओ।

२—मर्यादा की रक्षा

[इस कहानी के लेखक प्रेमचन्द हैं। यह इनका उपनाम है। वास्तव में इनका नाम धनपतराय था। इनका जन्म काशी के पास मढ़वा गाँव में संवत् १९३७ में और अन्त काशी में ८ अक्टूबर, सन् १९३६ को हुआ। बाबू धनपतराय बी० ए०, सी० टी० पहले सब-डिप्टी इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स और बाद में गोरखपुर नार्मल स्कूल में अध्यापक थे। सन् १९२१ के असहयोग-आन्दोलन में इन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ दी थी। वे उर्दू और हिन्दी के आजकल के सब से प्रसिद्ध और सफल कहानी एवं उपन्यास लेखक थे। अपने साहित्यिक जीवन के आरम्भ में इन्होंने 'नवाबराय' उपनाम से भी उर्दू में कुछ कहानियाँ लिखी थीं। इनकी रचनाओं में ग्रामीण लोगों के विचारों और कर्मों का वास्तविक चित्रण मिलता है। इनकी भाषा सीधी-सादी, मुहावरों से भरी हुई और मनमोहक होती थी। इसी से इनकी रचनाओं का बहुत आदर है

भी इस लड़ाई में पठानों के छक्के छूट गये। सम्भव था कि पठान सेना लड़ाई से भाग निकलती; परन्तु धन्य वीरवर दाऊद, जिसके अद्भुत साहस ने जादू का सा काम किया! दाऊद का पराक्रम देख पठान-सेना में जोश की एक ऐसी लहर उठी कि उसके प्रबल वेग के सामने राजपूतों की मुट्ठी भर सेना का टिकना असम्भव सा हो गया। देखते ही देखते युद्ध की दशा बदल गयी। राजपूतों की आशा के नितान्त प्रतिकूल दाऊद की विजय और अजीतसिंह की हार हुई।

महाराज अजीतसिंह के पराजय का फल यह हुआ कि राजगढ़ पठानों के अधिकार में आ गया। अजीतसिंह सपरिवार रानियों को साथ ले कुछ विश्वस्त राजपूतों के साथ राज्य छोड़ भाग निकला। जिस आशा से दाऊद ने इतनी नर-हत्या की थी, वह पूरी न होने पायी। उसने सोचा था कि जब राजसिंह पराजित हो पकड़ा जायगा तब वह अपनी मुक्ति के बदले पद्मिनी को देना स्वीकार कर लेगा। पर राजगढ़ में प्रवेश करते ही उसकी समस्त आशाओं पर पानी फिर गया। उस मूढ़ को यह नहीं पता था कि राजपूत अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए प्राणों को भी तृणवत् मानते हैं।

राजगढ़ से भागकर अजीतसिंह सपरिवार वन-वन भटकने लगे। जब और कहीं भी आश्रय न मिला तब उन्होंने एक वन में ही झोपड़ी डाल अपनी आयु के शेष दिन काटना निश्चय किया।

(२)

प्रातःकालीन वायु मन्दगति से बह रही थी। अरावली पर्वत

जीवनलीला वहीं समाप्त करने को ही था कि अकस्मात् वह स्वयं पृथ्वी पर गिर छटपटाने लगा।

राजपूत इसका कारण न जान सका। जब वह कुछ सँभला तब सूअर के पास गया और वहाँ उसने देखा कि सूअर के शरीर में एक तीर गड़ा है। यह देख उसके मन में विस्मय हुआ और वह जानने के लिए कि यह तीर किसका है, इधर-उधर देखने लगा। उसकी दृष्टि बहुत दूर न गयी थी कि उसने देखा कि एक दिव्य-मूर्ति शिकारी का वेष बनाये, हाथ में धनुष्य लिए एक अरबी घोड़े पर सवार है। इस मूर्ति के कान्तिमय मुख पर एक प्रकार की हँसी की झलक थी। यह देख राजपूत को अपनी दशा पर लज्जा हुई; परन्तु अपने उपकारी को धन्यवाद देना कर्तव्य समझ वह उसकी ओर बढ़ा।

यह देख वह सुन्दरी राजपूत के आने की प्रतीक्षा न कर एक ओर को चल दी और वृक्षों की ओट में होती हुई अदृश्य हो गयी। अब तो राजपूत के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसके मन में उस सुन्दरी के विषय में जो प्रश्न उठे थे, वे वहीं समा गये। अन्त में निराश हो वह अपने घोड़े पर सवार हुआ और जिधर वह गयी थी, उधर ही चल दिया।

(२)

दिन अधिक चढ़ आया था। राजपूत भी परिश्रम के कारण ठहरकर कहीं टिकाना पाने को व्याकुल हो उठा। इसी विचार से वह घोड़े को तेज चलाने लगा।

वह बहुत दूर न गया था कि उसे कुछ झोपड़ियाँ दिखलाई

पड़ीं। ये वे ही झोपड़ियाँ थीं, जिनमें अजीतसिंह और उसके कुछ स्वामि-भक्त राजपूत रहते थे। जब राजपूत यहाँ पहुँचा तब अजीतसिंह ने उसका स्वागत किया और अपनी लड़की पद्मिनी को उसके लिए जल लाने का आदेश दिया। थोड़े समय के पश्चात् पद्मिनी एक थाल में कुछ स्वादिष्ट फल और पात्र में शीतल जल ले उपस्थित हुई।

चित्त के स्वस्थ होने पर आगन्तुक ने अजीतसिंह से कहा, "जान पड़ता है कि आप किसी राजपूत-कुल को अलंकृत करते हैं; अन्यथा आपकी लड़की की-सी वीरता और अनुपम लावण्य साधारण मनुष्यों में दुष्प्राप्य है। क्या मैं आपके कुल का पूरा परिचय पा सकता हूँ?" यह प्रश्न सुनते ही अजीतसिंह के नेत्रों से वारिधारा बहने लगी। पर थोड़े ही समय में अपने-आपको सम्हालकर उसने अपना पूरा वृत्त साद्यन्त कह सुनाया।

अजीतसिंह की बातें सुनते ही राजपूत की आँखों से पानी छलकने लगा। उसने कहा, "अजीतसिंहजी, क्या आप मुझे पहचानते हैं?" अजीतसिंह ने कहा, "नहीं, पहिचानता तो नहीं; परन्तु जान पड़ता है कि लड़कपन में मैंने कहीं तुम्हें देखा है।"

आगन्तुक ने कहा, "मेरा नाम प्रतापसिंह है और मैं—" अभी प्रतापसिंह की बात समाप्त भी न हो पायी थी कि अजीतसिंह बोल उठे, "बेटा प्रताप! ओहो! मैं तुमको पहचान भी न सका। तुम्हें देखे मुझे पूरे दस वर्ष हो गये।" इतना कहकर अजीतसिंह ने प्रतापसिंह को गले लगा लिया।

प्रतापसिंह ने गंभीरतापूर्वक कहा, "अजीतसिंहजी, या तो मैं शत्रुओं को निकाल राजगढ़ से बाहर करूँगा या इसी प्रयत्न

से मर मिटूँगा। तुम्हारी पुत्री ने मेरी प्राण-रक्षा की है। मैं राजपूत हूँ, इसलिए इस उपकार का बदला अवश्य चुकाऊँगा।"

इन बातों को सुनकर अर्जुनसिंह का गला प्रेम से भर गया। उसने प्रसन्न होकर कहा, "बेटा, मेरी पुत्री पद्मिनी का भी यही प्रण है कि जो कोई मेरे राज्य से शत्रुओं का बहिष्कार करेगा उसी से मैं अपना विवाह करूँगी, अन्यथा अविवाहिता रहूँगी।"

पद्मिनी के इस प्रण को सुनकर प्रतापसिंह की भुजायें फड़कने लगीं, आँखों से आग की चिनगारियाँ बरसने लगीं और क्रोध से उसके ओंठ फड़कने लगे। उसने दर्प से कहा, "अर्जुनसिंहजी, पद्मिनी का यह प्रण सुन मैं बड़ा प्रसन्न हो गया हूँ। ऐसा प्रण राजपूतनियाँ ही कर सकती हैं। अपनी तलवार पर हाथ रखकर यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं उस अधम डाकू को जब तक राजगढ़ से बाहर न निकाल दूँगा तब तक दम न लूँगा। मुझे ईश्वर और अपनी तलवार का इतना भरोसा है कि मैं उसे मारकर पद्मिनी के पाणिग्रहण का अधिकारी बन सकूँगा।"

(४)

दोनों में ये बात हो रही थी कि संयोगवश अर्जुनसिंह के पास डाकू का दूत पहुँचा। आते ही उसने पहले अर्जुनसिंह को सलाम किया, फिर उसके हाथ में एक पत्र दिया। पत्र में जो लिखा था उसका सारांश यह है कि यदि आप अब भी पद्मिनी को मुझे अर्पण कर दें तो आप का छिना हुआ राज्य तुरन्त लौटा दिया जायगा।

(५)

आज क़िले का फाटक खुला है। दाऊद अपने बीस वीर पठानों के साथ पद्मिनी की अगवानी के लिए खड़ा है। उसकी शेष सेना क़िले से दूर पड़ी है।

इसी बीच में पद्मिनी की पालकी आयी। साथ में आठ-दस और पालकियाँ थीं और हर एक पालकी में छः-छः कहार लगे थे। सब के पीछे दस-पन्द्रह राजपूत सवार थे, जो शरीर-रक्षक के तौर पर नियुक्त थे। पद्मिनी अपना अरबी घोड़ा नहीं भूली थी। उसी की पालकी के साथ एक साईस घोड़ा लिए चला आ रहा था। पद्मिनी को आते देख दाऊद हर्ष से फूल उठा।

सब लोग क़िले के भीतर पहुँचे ही थे कि पद्मिनी हाथ में धनुष-बाण लिये एकाएक पालकी से बाहर निकल अपने घोड़े पर सवार हो गयी। घोड़े का साईस, जो वास्तव में प्रतापसिंह था, एक दूसरे घोड़े पर सवार हो गया। देखते ही देखते सभी कहार वीर राजपूतों के रूप में परिणत हो गये। एक क्षण की भी देर न हुई कि सारा दृश्य बदलकर और का और हो गया।

यह देख दाऊद अवाक् रह गया। यदि उसे इस षड्यन्त्र का थोड़ा भी ज्ञान होता तो वह अपनी सेना को क़िले से दूर न रखता। पर उससे क्या हो सकता था!

पहले तो पद्मिनी ने चाहा कि दाऊद को अपने तीर का लक्ष्य बनाकर उसका जीवन वहीं समाप्त कर दूँ; पर थोड़े ही समय में उसके हृदय में दया आ गयी। इसलिए उसने वह तीर, जो दाऊद के मारने को साधा था, उसके घोड़े को मार दिया।

पाठ-सहायक

ख्याति = प्रकाश। पाणिग्रहण = ब्याह, विवाह। नितान्त = बिल्कुल, एकदम। मृगवत् = हिरन के समान, बिना किसी मोह के। आहार = भोजन। आहत = चोट खाया हुआ, घायल। निस्तब्ध = निश्चेष्ट, क्रिया-हीन। अलंकृत = सुशोभित। वारिधारा = आँसुओं की धारा। साद्यन्त = आदि से अन्त तक। दर्प = घमण्ड। शपथ = कसम। परिणत हो गये = बदल गये। रमणीरत्न = स्त्री रूपी रत्न, श्रेष्ठ स्त्री।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ—पराक्रमी, अलौकिक, स्तम्भित-सी, विध्वस्त, अश्रु-प्रक्षालन, विस्मय, आदेश, आकर्षित, आगन्तुक, प्रसंग-पूर्वक, निर्वासित।

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—छक्के छूटना। आशाओं पर पानी फिर जाना। जीवन लीला समाप्त हो जाना। भुजायें फड़कना। आँखों से चिनगारियाँ बरसाना।

३. पद्मिनी और प्रतापसिंह का परिचय किस प्रकार हुआ था।

४. पद्मिनी ने अपनी संज्ञा का परिचय किस प्रकार दिया था? और प्रतापसिंह ने पद्मिनी का पाणिग्रहण कैसे किया?

५. पद-व्याख्या किसे कहते हैं? संज्ञा की पद-व्याख्या करने में किन-किन बातों को बतलाना चाहिये? पहले अनुच्छेद में आयी हुई संज्ञाओं की पद-व्याख्या करो।

एक डाली से दूसरी डाली पर फुदक जाना—कैसा भला लगता है! उनके अद्भुत कार्य मन को मोह लेते हैं और बड़े-बड़े नाच दिखलानेवालों को नीचा दिखाते हैं।

यह सब तो हमारे मनोरञ्जन की बातें हैं। अब हम अन्य लाभों का वर्णन करते हैं, जो इन्हीं पक्षियों के द्वारा मनुष्य पाता है। हमारा विचार है कि पक्षी हमारा बहुतसा अनाज खा जाते हैं; लेकिन हमने यह कभी नहीं सोचा कि यह कीड़े-मकोड़े पौधों की जड़ों में पड़ जायँ या बीजों को ही खा जाँय तो फसल को कितनी हानि होगी। अगर पक्षियों की पुलिस न होती तो एक ओर हम भूखों तड़प-तड़पकर मर जाते और दूसरी तरफ बड़े-बड़े पेटोंवाले कीड़े, जो हमारा अनाज खा-खाकर भयानक देह (मेघ) वाले हो जाते, हमारा सत्यानाश कर डालते। इस विषय में इन्हीं पक्षियों के द्वारा हम संसार में जी रहे हैं। कारण, इन पक्षियों का जीवन इन्हीं कीड़े-मकोड़ों पर है। इस प्रकार के पक्षी, जैसे—फाख्ता (पिड़की), तोता, मैना, जो दूसरे शब्दों में हमारे "कृषि-रक्षक" कहे जा सकते हैं, प्रायः पृथ्वी पर ही रहते हैं। उनके घोंसले खेतों के पास पेड़ों या घरों में होते हैं। मनुष्यों के हितू होने के कारण उनके घोंसले घरों की छतों और दीवारों के सूराखों में पाये जाते हैं। ऐसा काम केवल दिन में ही नहीं होता, रात को उल्लू-जैसे पक्षी भी यही काम करते हैं। इस प्रकार के पक्षियों की चोंचें और पंजे खास किस्म के होते हैं, जिनसे उन्हें अपना शिकार पकड़ने में बहुत मदद मिलती है।

दूसरे प्रकार के पक्षी वे हैं, जो पेड़ों के डाक्टर कहे जाते हैं।

शुतुरमुर्ग

गौरैया

कोयल

तोता

उल्लू

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ—सम्मान्, कल्याण, कर्तव्यपरायण, प्रमाण, सजीव, भयानक, प्रयत्न, क्रूरता, असाहसत्व, सत्पुर।
२. अर्थ लिखो और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—स्वामि-भक्त सेवक। सत्यानाश कर डालना। निगल जाना। पीछे-पीछे आ धमकना। सब कुछ चट कर जाना। लक्ष्य बनाना।
३. पक्षियों से मनुष्यों का मनोरञ्जन किस प्रकार होता है ? और मनुष्यों को उनसे क्या लाभ है ?
४. कठफोड़ा पक्षी से वृक्षों को क्या लाभ है ? और उसकी चोंच किस प्रकार की होती है ?
५. हवा की गन्दगी की सफ़ाई करनेवाले कौन-कौन पक्षी हैं ?
६. मछलियों से क्या लाभ होता है ?
७. मनुष्यों को पक्षियों का शिकार क्यों न करना चाहिये ?
८. कृषि-रक्षक, सावधान, सहायक, कृतज्ञ और सम्भव शब्दों के विलोम लिखो।
९. पद-व्याख्या का प्रधान लक्ष्य क्या होता है ? बिना सम्बन्ध दिखलाये पद-व्याख्या कैसे की जा सकती है ? उदाहरण देकर समझाओ।

सुहृद हमारे, हमारे प्रियवर,
हमारी माता के चक्षु के तारे।
न अब भी आलस में पड़ के बैठो,
दसों दिशा में प्रभा है छायी;
उठो अँधेरा मिटा है प्यारे,
बहुत दिनों पर दिवाली आयी।

पाठ-सहायक

मेघ = बादल। उपल = पत्थर। शृङ्ग = चोटी। बटोही = रास्ता चलने-वाला, राहगीर। गिरीश = हिमालय। पृथक् = अलग। चक्षु = नेत्र।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ—स्फटिक, मंजु, संगी, विभव, कर्म-शिक्षा, दिवाला, प्रभा और दिवाली।
२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—बल खुलना, गिरीश भारत का द्वार-पट है, अँधेरा फैला है घर में भाइयो, दिवाला हुआ।
३. हिमालय भारत का द्वार-पट क्यों कहा जाता है?
४. गङ्गा भगीरथ की पुण्य धारा कैसे कही जाती है?
५. भारत की फूट का क्या कारण है? और वह कैसे दूर की जा सकती है?
६. गीता का उपदेश किसने, किसको और किस समय दिया था?
७. अर्जुन, युधिष्ठिर, भगीरथ और कृष्ण के विषय में तुम जो कुछ जानते हो लिखो।
८. इस कविता को याद करके सुनाओ।

भरा होता है। ये लोटे भी इसी प्रकार के रहते हैं। ऊपर तो खूब सफाई और भीतर गन्दगी रूपी हलाहल विष!

पीने का पानी गहरे कुएँ से लिया जाय, तो वह बहुधा स्वच्छ रहता है, परन्तु कभी-कभी पत्ते आदि गिरने से वह मैला हो जाता है। तालाबों, बावलियों तथा बरसात में नदियों का पानी मैला रहता है। अन्य ऋतुओं में नदी की बीच धारा का पानी प्रायः शुद्ध होता है, परन्तु पानी भरनेवाले आलस्य में आकर किनारे का ही जल ले आते हैं। यह पानी बड़ा विकारी होता है। किनारे पर लोग नहाते-धोते, मुख-मार्जन करते हैं; ढोर आकर पानी गँदला करते और उसमें मल-मूत्र भी त्यागते हैं। विकारी जल को औटाकर पीने में कोई हानि नहीं। कचरे से भरे हुए पानी को छान कर अथवा फिटकिरी, बादाम आदि घिसकर निथराना चाहिये और केवल स्वच्छ जल पीना चाहिये।

मैला पानी पीने से हैजे की बीमारी उत्पन्न होती है। उसमें यदि मल-मूत्र का अंश आ जाता है, तो पीनेवालों को मोतीझरा हो जाने का भय रहता है। इस कारण पानी पीने के घड़े, नाबदान आदि स्थानों से, जितनी दूर हो सके उतनी दूर रखने चाहिये। कुएँ, तालाब, बावली आदि जलाशयों में 'मेकइगेनेट पाउडर' नामक लाल रङ्ग की ओषधि छोड़ देने से जलदोष निकल जाता है। औटाकर जल पीनेवालों को हैजे की बीमारी बहुत ही कम होती है।

वैद्यक शास्त्र में लिखा है कि कुएँ से निकला हुआ जल हलका और गुणकारी होता है, मिट्टी के घड़ों में रखा हुआ जल कुछ भारी, कफकारी और विकारी रहता है। बैशाख और

हो जायँगे। पीने के पानी अथवा भोजन के पदार्थों पर कचरा अवश्य गिरेगा और उन्हें विकारी कर देगा। घर का फर्श, उसकी दिवालें, उनका छप्पर आदि स्वच्छ बनाये रखने से बहुत कुछ लाभ होगा; परन्तु यथार्थ लाभ तभी होगा, जब घर में प्रत्येक जगह अच्छा प्रकाश पड़े और हवा का आवागमन बराबर जारी रहे।

स्वच्छ हवा और सूर्य का प्रकाश—ये दोनों बीमारियों के बड़े भारी शत्रु हैं। जिस घर में इन दोनों का राज्य हो, वहाँ बीमारी का जोर बढ़ने नहीं पाता। शहर के लोगों को दवा-दारू का सुभीता रहता है; उन्हें समय पर औषधियाँ मिल जाती हैं; उनको रहने के लिए अच्छे घर मिल जाते हैं; गाँववालों की अपेक्षा उन्हें खाने-पीने को उत्तम पदार्थ मिलते हैं; तो भी औसत में शहर वालों का आहार कम और शरीर अधिक क्षीण रहता है और वे उम्र भी कम पाते हैं। इसका कारण यही है कि उनको शुद्ध वायु और धूप कम मिलती है।

अमृतसर, काशी, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास आदि शहरों में सैकड़ों गलियाँ और हजारों घर ऐसे मिलेंगे, जहाँ सूर्य देवता थोड़ी देर अर्थात् घण्टे दो घण्टे दर्शन देकर विदा हो जाते हैं। वहाँ की हवा भी बड़े-बड़े मकानों के रहने के कारण स्वच्छन्द नहीं फिरती और बन्द रहने के कारण दूषित हो जाती है। यही कारण है कि बड़े बड़े शहर रोगों के घर हैं। शुद्ध हवा न मिलने के कारण क्षय रोग बढ़ जाता है, सूर्य का प्रकाश कम होने से प्लेग बल पकड़ता है। वहाँ कभी हैजा, कभी प्लेग, कभी मलेरिया, कभी मोतीझरा—एक न एक रोग बना ही रहता है और हजारों

कश, लाखों मनुष्यों के प्राण जाते हैं । जो मनुष्य इन-२ आपत्तियों से बच जाते हैं, वे भी तन-क्षीन मन-मलीन हो जाते।

सूर्य का प्रकाश और शुद्ध वायु—ये दो अमृत हैं। इन जितना अधिक सेवन किया जाय, उतना ही अच्छा है । ग्रा तथा गाँवों के रहनेवालों को इनका पूरा-पूरा लाभ मिल सकता परन्तु वहाँ के घर बनानेवालों की जितनी तारीफ की जा थोड़ी है । दरवाजों और खिड़कियों से तो मानों उनका पूर्वज का वैर है । बहुतेरे घर ऐसे बने रहते हैं जिनके कमरे दोपहर में भी पर्वतों की गुफाओं का अन्धकार साक्षात् प्रद करते हैं । यदि यह कहा जाय कि घर बनानेवालों की इच्छा रखती है कि उनमें रहनेवालों को भूले-भटके भी प्रकाश शुद्ध वायुरूपी अमृत न मिल सके, तो कदाचित् अन्याय होगा। विष्णु भगवान के अनेक प्रयत्नों को टालकर एक रा ने समुद्र-मथन के समय अमृत पी ही लिया और वह अमर होन हो गया एक से दो हो गया। ऐसा पौराणिक कथा है। भाग्यव शहर के लोगों का बहुत कुछ समय बरामदे में व्यतीत होता है इस तरह वे राहु-केतु के समान इन दोनों अमृतों का स्वाद थो बहुत ले लेते हैं। यदि ये लोग यूरोप निवासियों की तरह क मे ही अपना समय व्यतीत करते होते, तो न जाने क्या होत तो भी यदि कमरों और कोठों में भी प्रकाश और हवा आने लिए प्रबन्ध किया जाय, तो बहुत ही लाभ हो।

सोने के समय खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिये। मुँह ढों कर सोना हानिकारक है, क्योंकि साँस द्वारा निकली हुई ग हवा बाहर निकलने नहीं पाती और साँस लेते समय फिर पेट

आकर हानि करती है। लोगों की समझ है कि मुँह अथवा खिड़की खुली रखने से सरदी लगकर खाँसी हो जाने या ज्वर आ जाने का भय रहता है। यदि खिड़की सिर के पास हो और हवा तेज चलती हो, तो सोते समय कदाचित् कुछ सरदी लग जाती है, या ज्वर हो आता है; परन्तु यदि पलंग कुछ आड़ में कर दिया जाय और खिड़की खुली रहे, तो कदापि ऐसा न होता। नाक में एक ऐसी झिल्ली रहती है, जो बाहर की ठण्ढी हवा को गरम कर भीतर जाने देती है। सोते समय नाक से ही साँस ली जाती है, तो फिर सरदी कहाँ से हो जायगी। मुँह अथवा खिड़की आदि खुली रहने के कारण कनपटी में सरदी अवश्य लगेगी; पर वहाँ के लिए तो ईश्वर ने पहले ही बालों के रूप में दुशाला दे दिया है। यदि उतने पर भी तृप्ति न हो, तो कुछ कपड़ा या रूमाल लपेट लेना चाहिये।

घर के भीतर और उसके आसपास सड़ने-गलने अथवा अन्य किसी प्रकार के दुर्गन्ध देनेवाले पदार्थ न फेंकने चाहिये और न उनको जमा होने देना चाहिये; क्योंकि दुर्गन्ध से हवा अशुद्ध हो जाती है। अन्न के कण भी इधर-उधर पड़े न रहने देना चाहिये। उनको खाने के लिये चूहे, छछूँदर आदि आ जाते हैं और 'जहाँ पड़े पराल, वहीं जागे सारी रात' इस कहावत को चरितार्थ करके घरों में अपने बिल बनाकर रहने लगते हैं। यदि उनको इस तरह खाने को न मिले, तो वे और किसी यजमान को शरण में पहुँचें। यदि प्रति दिन अन्न के कण होशियारी से समेटकर बस्ती के बाहर कुछ दूर पर फेंक अथवा डाल दिये जायँ, तो गाँव में चूहों की संख्या बहुत ही कम हो जाय। इन्हीं चूहों

इस स्वप्न की चर्चा देश भर में फैल चुकी थी । निष्कलङ्क वीर क्षत्रिय बालक की आत्मा के पुनर्जन्म होने का विश्वास सब को हो चुका था । शत्रुओं से बैर लेने और उनके द्वारा अपूर्ण कामों के होने का सबको निश्चय था । उस बली आत्मा के पुनः अवतरित होने से शाहजहाँ का पतन होगा, उसके अत्याचारों की इतिश्री होगी, नरत-नाडस ध्वंस होगा, शाहजहाँ को अपने पापों का फल भोगने के लिए पतित होना पड़ेगा और अपने पापों के भोग के लिए अन्तिम समय में उसे घोरतम यातनायें भुगतनी पड़ेगी, यह विश्वास लोगों के हृदय में पूरी तरह से बैठ चुका था । अतः यह स्वाभाविक था कि चम्पतरायजी के सन्तान होते ही देश भर में उनके विश्वासानुकूल एक नवीन स्फूर्ति और जीवन शक्ति तथा साहस का सञ्चार हो जाता, पिता चम्पतराय जी और माता श्रीलालकुँवरिजी अपना दुःख भूल जातीं और शाहजहाँ एवं उसके पक्ष के विरुद्ध उनके हृदय में प्रतिशोध की प्रचण्ड ज्वाला नये सिरे से धधक उठती और वास्तव में हुआ भी ऐसा ही । ये कौटिल्य की नीति से दीक्षित थे । ये केवल धर्म-भीरु न थे । इसलिए शाहजहाँ को निर्बल पाते ही उसके सन्तानों में जैसे ही वंशाग्नि लगी, वैसे ही आँधी के रूप बन उसे धौंकने लगे और शाहजहाँ को चुनौती दे वे उसके शाही इलाके को दबा बैठे । रण भेरी बज उठी, रणचण्डी ने अपना ताण्डव प्रारम्भ कर दिया । अपने पूर्व वैरी शाहजहाँ और प्रतिद्वन्द्वी दाराशिकोह के विरुद्ध इन्होंने औरङ्गजेब और मुराद को सहायता दी । अपने बाहुबल से उन्हें चम्बल पार ले आये और वीर क्षत्रियोचित ललकार देकर श्यामगढ़ के मैदान में शाहजहाँ के भाग्य

पर इन्होंने करारी ठोकर दे उसे औंधे मुँह गिरा दिया। मुगल-वंश की राजश्री एक प्रकार से विचलित हो गयी। कटे कनकौवे की भाँति यद्यपि यह कुछ काल और भी ऊँची हो आकाश में मँडराती पर वह इसी समय निराश्रय हो गयी। औरङ्गजेब के पश्चात् ही क्षण-क्षण क्षय को प्राप्त होती गयी और अल्पकाल में ही महाराष्ट्रों, सिक्खों, जाटों, बुँदेलों तथा अन्य राजपूतों ने उसकी चिता फूँक ही दी।

हमारे चरित्र-नायक महाराज छत्रसाल का जन्म ऐसे काल में हुआ था, जब बुन्देलखण्ड में ही नहीं, किन्तु समस्त भारत में युद्धाग्नि धधक रही थी। तीरों की सनसनाहट और गोलों की कड़कड़ाहट उस काल में नभ-मण्डल में व्याप्त थी। इन्होंने आँखें खोलते रौद्रता का दर्शन किया था। अतः वही उनके हृदय-पटल पर खचित थी। मखमली गद्दीवाले पालने और फूलों की सेजों पर उनका बाल्यकाल व्यतीत नहीं हुआ था। इस कारण कष्ट सहने के वे अभ्यासी थे। आपत्तियों के सहन करने में अभ्यस्त थे और भयानक परिस्थिति उपस्थित होने पर भी उन्होंने भयभीत होना नहीं सीखा था। प्रकृति ने विकट परिस्थितियों का सामना करने का पाठ उन्हें बाल्यावस्था में ही पढ़ा दिया था। किशोरावस्था में ही माता-पिता-विहीन हो यद्यपि वे अनाथवत् हो गये थे; फिर भी प्रकृतिप्रदत्त साहस और विवेक के बल से वे निराश नहीं हुए अपने ज्येष्ठ भ्राता अङ्गदरायजी के परामर्श और सहायता से बुन्देलखण्ड को स्वतन्त्र करने और हिन्दू संस्कृति की रक्षा करने का विचार उन्होंने दृढ़ कर लिया। व्यावहारिक बुद्धि का अवलम्ब ले उन्होंने मुगल सम्राट् के महा सेनानायक

हुआ। होनहार कुमार का मुख-मण्डल देखते ही शिवाजी उसके हार्दिक भावों के रहस्यों को ताड़ गये। कुमार की प्रतिभा अलौकिक थी। नस-नस में साहसी रक्त का सञ्चार था। बात-बात से वीरत्व टपकता था। मन महत्त्वाकाङ्क्षाओं का भाण्डार था। कुमार का भविष्य, दिव्य दृष्टिवाले शिवाजी को पहले ही समुज्ज्वल प्रतीत हुआ। यह जानकर कि यह मनस्वी चम्पतराय का पुत्र है, शिवाजी के आनन्द की सीमा न रही और उसे प्रिय पुत्र मान शिवाजी ने छाती से लगा लिया।

छत्रसाल ने तत्पश्चात् शिवाजी की सेना में रह कर हिन्दू जाति की सेवा की वृत्ति धारण करने की इच्छा प्रकट की, जिसे सुन गुणग्राही, निस्पृह, उदार शिवाजी ने प्रेम से उनके सिर पर हाथ फेर उनके विचार की सराहना करते हुए कहा, "वत्स, तुम्हारा कार्य-क्षेत्र कहीं और है। तुम्हारी जन्म-भूमि, तुम्हारे पूर्वजों की क्रीड़ास्थली, आज पददलित हो रही है और तुम्हारे यशस्वी वीर-कुलों से अपने उद्धार की बाट देख रही है।"

शिवाजी से प्रोत्साहन पा वीर-केसरी कुमार छत्रसाल शुभकरणजी से मिलते हुए बुन्देलखण्ड आ पहुँचे। बिखरे हुए बुन्देलखण्ड का संघटन प्रारम्भ कर दिया और यह दृढ़ सङ्कल्प किया :—

तातें अब दिल्लीस के दीरघ दलन विलोय।
अपुनों उद्यम ठानवी, होनी होय सो होय॥

देश में आते ही सन्त-शिरोमणि महात्मा प्राणनाथजी का इनसे साक्षात् हुआ। ज्योति से ज्योति मिल गयी। महानोपदेष्टा को परम कर्त्तव्य-परायण अनुयायी मिल गया। सोने में सुगन्ध आ मिली, विवेक और वीरता का गठ-बन्धन हो गया। फिर

प्राप्त होती थी, उसे ओड़छाधीश जब राज्यतिलक करते थे तब ही वह उपाधि मान्य होती थी, अन्यथा नहीं। ओड़छाधीश राजा और उनके वंशज दतियाधीश राय कहलाते थे। इसलिए यह आवश्यक था कि छत्रशाल का भी राज्याभिषेक ओड़छाधीश की ओर से होता; परन्तु वंशविमर्द-वश ऐसा होना असम्भव जान छत्रशाल ने राज्य-मर्यादा के रक्षार्थ १७४४ विक्रमीय में वेदोक्त निर्देशानुसार अपना राज्यतिलक कराया और ओड़छाधीश के ठौर अखिल भुवनपति विश्वम्भर को सम्राट् जाना।

महाराज छत्रशाल पर ईश्वर दयालु था। उसने उन्हें दूध-पूत दोनों ही दे रक्खे थे। उनके उपार्जित राज्य की आय दो-ढाई करोड़ के लगभग थी। श्रीमान बाजीरावजी पेशवा ने बंगस से युद्ध होने के समय उनकी सहायता की थी। वह समय छत्रशाल की वृद्धावस्था में सङ्कट का समय था। इसलिए महाराज ने कृतज्ञता प्रकट करने के लिए उन्हें अपना सबसे बड़ा आदरणीय पुत्र मानकर अपने राज्य का तृतीयांश दे दिया और अन्य सन्तानों को कुछ भूखण्ड जागीर रूप में देकर शेष राज्य के दो भाग करके पन्ना राज्य महाराज हृदयशाह को और जैतपुर का राज्य महाराज जगतराज को दे, ९० वर्ष की अवस्था में आतुर संन्यास ले सुरपुर की यात्रा की। उनका स्मारक छत्रपुर राज्यान्तर्गत उनकी राजधानी मऊ नामक नगर के निकट धुबेला ताल के दक्षिण-पूर्वार्ध कोण पर बना हुआ है।

महाराज छत्रशाल को बुन्देलखण्ड का शिवाजी कहा जाय तो उचित ही होगा। महाराज छत्रशाल की वंश-वाटिका आज बुन्देलखण्ड में लहलहा रही है। उनके विस्तृत राज्य पर आज

अर्थ समझाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—प्रचण्ड तथा अखण्ड ज्योति का प्रकाश होना; लोहा लेना, गौरवीय पताकायें फहराना, रणभेरी बजना, औंधे मुँह गिराना, धाक जमाना और ज्योति में ज्योति मिलना।

महाराज छत्रसाल के जन्म के सम्बन्ध में तुम क्या जानते हो? उनके शूरवीर होने का क्या प्रमाण है?

छत्रसाल का शिवाजी के पास आने का क्या कारण था? और शिवाजी ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया?

छत्रसाल ने बुन्देलखण्ड की बिखरी हुई शक्ति को संगठित करने का क्या प्रयत्न किया था? और अंत में विजयी होकर उसने अपना राज्य कहाँ तक फैला लिया था?

छत्रसाल को औरङ्गजेब से क्यों अलग होना पड़ा था? और उसका राज्य तिलक किस प्रकार हुआ था?

छत्रसाल ने बाजीराव को अपने राज्य का तृतीयांश क्यों दिया था? और अपने राज्य का बँटवारा उन्होंने किस प्रकार किया था?

सन्धि किसे कहते हैं?

राम + ईश्वर, जगत + नाथ—शब्दों के मिलने से रामेश्वर और जगन्नाथ बनते हैं। तुम इस पाठ में आये हुए उन शब्दों को छाँटो जिनमें सन्धि हो और उनकी सन्धियां को अलग करो।

पाठ-सहायक

सलिल = पानी । वसुधा = पृथ्वी । अवली = पंक्ति । चंचला = बिजली । जलद = बादल । केकी = मोर । ग्रीष्म-समय = ग्रीष्म ऋतु का राज्य, शासन ।

अभ्यास

शब्दार्थ लिखो — सुचि, सुषमा, सद्गुण, विपुल, सुरधनु-वर्द्धित, सरवर, चपला, दादुर, विजय-दुंदुभि ।

अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—'वसुधा सजी सुषमा सदन ।' 'लसत मनु वनमाल धारे ललित श्रीघनश्याम ।' 'मर्दन दनुज अकाल लागी' । विजय-दुन्दुभी बजना ।

वर्षा ऋतु कब से शुरू होती है ? और इसके आरम्भ में मौसिम कैसा रहता है ?

वर्षा ऋतु में इन्द्र धनुष कैसा प्रतीत होता है ? और इसमें कितने रङ्ग होते हैं ?

वर्षा ऋतु में कौन-कौन से जीव अधिक प्रसन्न रहा करते हैं ।

हरित-मनि मानिक क्या हैं ? उनके रङ्ग कैसे होते हैं ?

इस कविता को कण्ठाग्र करके सुनाओ ।

सङ्कल्प भिन्न भाषा द्वारा उच्चारण किया जाता था। आजकल (माड्रिजी) का बनाया सङ्कल्प प्रयोग में आता है। उसमें कहा जाता है कि श्रीभगवान नारायण की रची हुई अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड-स्वरूप सृष्टि में एक हमारा ब्रह्माण्ड है, जिसमें १४ लोक हैं। हमारे लोक का नाम भूलोक है, जिसके सात द्वीपों में जम्बू द्वीप वह है, जिसको हम अपना कहते हैं। जम्बू द्वीप के नव खण्डों में से एक भरत नामक खण्ड में आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्त नाम के क्षेत्र में अमुक स्थान पर मैं·······बस इतना कहते ही कहनेवाले की तुच्छता का परिचय मिल जाता है। ईश्वर की इस विशाल, अनन्त सृष्टि में मनुष्य ऐसा भी तो नहीं जैसा आकाश-चुम्बी लहरों वाले महासागर में पड़ा हुआ एक तिनका। सङ्कल्प का उद्देश्य है मनुष्यों को समस्त संसार के विधाता ईश्वर के समक्ष नम्र बनाना।

संकल्प में कहा जाता था कि गत वर्ष में जितने कायिक, वाचिक तथा मानसिक पाप हुए हों, उन सब के दूर करने के लिए मैं वेदों को ग्रहण करूँगा। स्वाध्याय किये गये वर्ष भर के पापों का पश्चात्ताप करने का यह बड़ा अच्छा समय पूर्वजों ने निर्धारित कर लिया था।

सङ्कल्प के अनन्तर नाना प्रकार की ओषधियों से स्नान किया जाता था, जिनमें दूब और कुशा उल्लेख योग्य हैं। प्राचीन जन अनेक भाँति के विदेशी अपवित्र साबुनों का व्यवहार करके अपने शरीरों को दूषित नहीं किया करते थे, प्रत्युत गोमय समान अपूर्व कृमि-नाशक सुलभ वस्तुओं का ही देह पर लेप करके स्वच्छ रहते हुए आरोग्य प्राप्त करते थे।

प्राचीन महर्षियों ने जिस प्रकार वेद-तत्व को समझकर
उसका संसार में प्रचार किया था, उसी प्रकार हम सभी का यह
र्तव्य होना चाहिये कि वेदोक्त ज्ञान-राशि को स्वयं जानें तथा
गत में व्याप्त अज्ञानान्धकार को वेद प्रचार रूपी सूर्य के आलोक
रा हटाकर संसार में भारतवर्ष का मस्तक उन्नत तथा प्रकाशवान
र दें । यद्यपि श्रावणी के अवसर पर देव-पूजा तथा हवन
ादि पुण्यकृत्य भी किये जाते थे, तथापि वेद-चर्चा की ही
धानता रहती थी । मुख्य कृत्य इस दिन का वेदों का प्रारम्भ
रना है । इसी कारण इसका नाम 'उपाकर्म' प्रसिद्ध हुआ ।
ाज से प्राचीन भारत के विद्यालयों में वेद की पढ़ाई आरम्भ हो
ाती थी । वे विद्यालय कैसे थे, इस विषय में नीचे दो शब्द
लेखे जाते हैं :—

जिन दिनों वेद का सर्वत्र प्रचार था, वे दिन स्वर्ण युग के
थे । उस समय के विद्यार्थी आज के समान विलासिता-पूर्ण
नगरों में ही खुले हुए स्कूल कॉलिजों में रहकर फैशनों का
अध्ययन करते हुए विदेशी सभ्यता को स्वीकार नहीं किया करते
थे । उनके विद्यालय नगरों के सम्पर्क से बहुत दूर, स्वच्छ तथा
स्वास्थ्य-प्रद वायु में होते थे । लहलहे-विकसित, फल-निकर-परिपूर्ण,
शोभित वाटिकाओं के कलरव से निनादित, शीतल मन्द
सुगन्ध वायुवाले वन-उपवनों में निवास करते हुए गुरुजनों के
चरण कमलों के निकट बैठकर प्राचीन काल के छात्र अनेक
शास्त्रों का अध्ययन करते थे । जगत के कल्याण पर स्थित
आमलक के समान जाननेवाले अनुभवी आचार्यों के सारगर्भित
व्याख्यानों को सुनकर जो अलभ्य लाभ होता था, वह अकथनीय

प्रतीत होती। सब जानते हैं, वेद-तत्व का समझ लेना हर एक का काम नहीं है। फाल्गुन मास के आरम्भ से ही वैदिक डिपार्टमेण्ट बन्द कर दिया जाता था और वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा के उपरान्त श्रावणी को वेद का सेवन प्रारम्भ होकर शरद्-ऋतु के द्वितीय दिवस से नियम-पूर्वक वेदाध्ययन होता था, जो शरद, हेमन्त तथा शिशिर के अन्त तक चलता रहता था। विद्यार्थी अवशिष्ट छः महीनों में क्या किया करते थे, इसके विषय में यही कहा जा सकता है कि वे इन दिनों में शिक्षादि वेद के अंग, इतिहास, राजनीति, दर्शन, पुराण, स्मृति, भूगोल, खगोल आदि-आदि विषयों का अध्ययन करते तथा ६४ कलाओं को सीखा करते थे।

इसी दिन भद्रा-वर्जित तीसरे पहर को पुरोहित यजमानों के, स्त्रियाँ पुरुषों के, गुरु शिष्यों के हाथों में मंत्रों से पवित्र की हुई चावल, सरसों तथा सुवर्ण-युक्त रेशमी राखी बाँधा करते थे, जो केवल देखने में ही सुन्दर नहीं, प्रत्युत सुवर्ण आदि के संयोग से शरीर को भी हितावह होती थी। इसी कारण इस उत्सव का नाम रक्षा-बन्धन भी प्रचलित है।

श्रावणी का वेद से सम्बन्ध अधिक रहा है। इसी परमोत्तम दिवस को श्रीभगवान ने हयग्रीव नामक अवतार धारण करके सामवेद का प्रचार किया। परन्तु खेद है, वही साम आज नष्ट-प्राय हो रहा है। उसको पठन-पाठन पद्धति का प्रचार अत्यन्त न्यून है। श्रीनारायण का अवतार होने के कारण इस उत्सव को भी हयग्रीव-जयन्ती भी कहते हैं।

पाठ-सहायक

बृहद् = बड़े । तट = किनारा । अर्वाचीन = नूतन । तुच्छता = नीचता । प्रमादवश = असावधानी से, भ्रमवश । गोमय = गोबर । यज्ञोपवीत = जनेऊ । आलोक = प्रकाश । सम्पर्क = लगाव । मृग-निकर-परिवृत = मृगों के समूहों से घिरा हुआ । करतलपर स्थित आमलक = किसी चीज़ का पूर्ण ज्ञान । सारगर्भित = तत्त्व से भरा हुआ । कुटीर = कुटिया । नैसर्गिक = स्वाभाविक । डिपार्टमेण्ट = विभाग । सेशन = सभा या अन्य संस्थाओं के कार्य के प्रारम्भ होने का काल । अवशिष्ट = शेष, बचा हुआ । हिंसावह = हिंसा करनेवाली । न्यून = कम ।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ—अध्ययन, पद्धति, आकाश-चुम्बी, निर्धारित प्रस्तुत, आदेश, कामना, विश्वामित्रपूर्ण, निनादित, होम-धूम कलुषित, आत्यात्मिक ज्ञान और यजमान ।

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—'कायिक, वाचिक तथा मानसिक पाप' । 'वे दिन स्वर्णयुग के थे' । करतल पर स्थित आमलक के समान जानना ।

३. श्रावणी कब होती है ? और उसका यह नाम क्यों पड़ा ?

४. श्रावणी करने की क्या विधि है ? और यह क्यों की जाती है ? मनुष्य इस कर्म के करने से किस बात की कामना किया करते हैं ?

५. श्रावणी कर्म के पश्चात् पूजन का और क्या विधान है ?

६. श्रावणी का दूसरा नाम उपाकर्म क्यों है ?

प्राचीन और नवीन विद्यालयों में तथा उनकी शिक्षा-प्रणाली में क्या अन्तर है ?

वेदों की पढ़ाई कब तक होती थी ? और अवकाश काल में विद्यार्थियों के अध्ययन के अन्य विषय और कौन-कौन थे ?

रक्षा-बन्धन कब होता है ? पुरोहित किस चीज़ को रक्षा बना कर यजमानों के हाथ में बाँधा करते थे ?

४. श्रावणी को हयग्रीव जयन्ती क्यों कहते हैं ?

५. संधियाँ कितने प्रकार की होती हैं ? उदाहरण सहित लिखो ।

---

६ — कपड़े की आत्म-कहानी

[यह लेख श्रीयुत श्रीरामलाल नेवटिया ने लिखा है । आप फतहपुर (जयपुर रियासत, राजपूताना) के निवासी मारवाड़ी वैश्य हैं । आप हिन्दी-साहित्य के विशेष प्रेमी हैं । आपने 'कश्मीर' नामक एक सचित्र बृहद् ग्रन्थ लिखा है, जिसमें कश्मीर का प्राकृतिक, भौगोलिक एवं ऐतिहासिक वर्णन बहुत अच्छे ढंग से किया गया है । नेवटियाजी ने यूरोप की यात्रायें, मुस्लिम स्मारक और कई अन्य पुस्तकें भी लिखी हैं । इन सब की भाषा की सफ़ाई और वर्णन की चतुरता प्रशंसनीय है । यह आपके पुस्तक लेखों में से है, जो समय-समय पर विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं ।]

हमारी कहानी बड़ी विचित्र है । हमने इतने हेर-फेर देखे हैं, जितने शायद ही किसी ने देखे हों । हमारा जन्म रुई से हुआ है ।

दूसरी तरफ लोहे के टुकड़े रखे गये। यहाँ हमारे और भी भाई पहले से थे। उनसे पूछने पर मालूम हुआ, यह 'काँटा' है और यहाँ हमारा वजन हो रहा है।

अब हम जिस नयी जगह में पहुँचे, वह बड़ी भयानक थी। सैकड़ों आदमी दौड़-धूप कर रहे थे। एक बड़े से मकान से ऐसी कर्कश आवाज आ रही थी कि हम तो बहरे-से हो गये। हम कुछ सोच ही रहे थे कि इतने में न जाने कहाँ से बरसात आ पड़ी। ऊपर आँख उठाकर देखा तो वे बादल न थे, जो खेतों में दिखायी देते थे। यहाँ तो वही दो हाथ और दो पैर वाला आदमी एक लम्बी सी नाली से पानी उछालकर हमें भिगो रहा था। हम ठिठुरे जा रहे थे। अभी तो न जाने कितने कष्टों का सामना करना था!

दो दिन बाद हमें एक ऐसे यन्त्र का सामना करना पड़ा, जिसकी बेदर्दी देखकर हम घबरा गये। हमारे जितने बिनौले बीज थे, सब हमसे अलग किये जाने लगे। इस आफत का सामना कर लेने पर तो हमें मृत्यु का ही सामना करना पड़ा। एक लोहे के लम्बे-से कुएँ में हम भरे जाने लगे। मजदूरों की लात खाते-खाते हम हैरान हो गये। इसके बाद एक लोहे का भारी वजन ऊपर से हमें दबाने लगा। हमारे तो प्राण सूख गये। हम जो फूले-फूले फिर रहे थे, पिचक गये। लोहे की पत्तियों से बाँधकर हम गैंठी बना दिये गये। अब लोग हमें रुई की गाँठ कहने लगे।

इसके बाद हमारी लम्बी यात्रा शुरू हुई। एक लम्बी सी गाड़ी में हम सब भर दिये गये। जङ्गलों, पहाड़ों और नदियों

एक ग़रीब की कुटिया देखने का ही सौभाग्य प्राप्त हुआ। बम्बई से फिर एक देहात में पहुँचे।

किसान ने बड़े प्रेम से हमारी धूल निकालकर हमें धुना। धुनने में हमें कष्ट तो हुआ; पर हम फूले न समाये। हमारा शरीर फूल-फूलकर चौगुना हो गया! इसके बाद हमें सूत का रूप दिया गया। एक औरत बड़े प्रेम से चरखे को चलाती और मधुर-मधुर गीत गाती हुई सूत कातती। सूत तैयार हो जाने पर कपड़ा बुना गया। जुलाहा हमको लेकर बाज़ार में गया। हमारा नाम 'खादी' पड़ा। हम बेच दिये गये।

हमारा ख़रीदार. एक मध्य-स्थिति का आदमी था। उसने उस खादी का एक कुर्ता बनवाया। गर्मी, धूप और शीत से हम सब भाई मिलकर उसकी रक्षा करते। एक दिन अकस्मात् हमारी भेंट उन भाइयों से हो गयी, जिन्हें हम बम्बई में छोड़ आये थे। उनका नया रङ्ग-रूप देखकर तो हम दङ्ग रह गये। हम खादी के कुर्ते के रूप में थे और वे एक बढ़िया विलायती कपड़े के कोट के रूप में आकर हमारे ऊपर लद गये। हम दोनों की बातें होने लगीं। हमने अपनी कहानी पूरी कर दी तो उसने भी अपनी कहानी इस प्रकार सुनायी :—

बम्बई से हम लोग जहाज़ पर सवार हुए। कई दिन तक समुद्र की हवा खाते-खाते हम विलायत—सात समुद्र पार—पहुँचे। उस जगह का नाम 'मैनचेस्टर' था। वहाँ बड़े-बड़े कल-कारखाने थे। मशीनों में हम कूटे-पीसे गये। धुने गये, मशीनों में ही काते गये और उसके बाद कपड़ा बनकर फिर अपने देश को लौट आये।

कपड़ा किस प्रकार बनाया जाता है ? भारतवर्ष में कहाँ-कहाँ कपड़ा तैयार किया जाता है ?

विलायत में सब से अच्छा कपड़ा कहाँ बनता है ? विलायती और देशी कपड़ों में क्या अन्तर होता है ?

पुस्तक की आत्म-कहानी लिखो।

शब्दों के उत्पत्ति के विषय में तुम क्या जानते हो ? तत्सम और तद्भव किसे कहते हैं ? प्रत्येक के पाँच-पाँच उदाहरण लिखो।

१०—लङ्का-वर्णन

[यह कविता पण्डित रामचरित उपाध्याय के बनाये हुए 'राम-रित-चिन्तामणि' नामक काव्य से ली गयी है। उस काव्य में श्रीरामचन्द्र कथा खड़ी बोली में मनोहर ढङ्ग से वर्णित है। सीता की खोज करने लिए लङ्का पहुँचने पर हनुमानजी ने उसे जिस रूप में देखा था उसका र्णन यहाँ किया गया है।

पण्डित रामचरितजी का जन्म एक विद्वान् सरयूपारीण ब्राह्मणवंश कार्तिक कृष्ण चतुर्थी, सम्वत् १९२९ को गाज़ीपुर में हुआ। आपने स्कृत का पुरानी पद्धति से अध्ययन किया है और उसके व्याकरण और साहित्य में अच्छी योग्यता प्राप्त की है। आजकल आप गाज़ीपुर में ही रहते और अपनी ज़मींदारी की देख-रेख करते हैं।

उपाध्यायजी पहले ब्रजभाषा में पुराने ढङ्ग की कविता करते थे। बाद में खड़ी बोली में लिखने लगे। आपके कई काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित

पुरस्फाटक चार सुचारु रहे,
इनकी उपमा कवि कौन कहे ?
कनकाचल चार मनो स्थित थे,
मणि मण्डित थे, नभ चुम्बित थे ॥ ६ ॥

प्रहरी उनमें दृढ़ चौकस थे;
अति निर्भय थे, प्रभु के वश थे ।
गति थी न वहाँ पर मारुत की,
मति दैत्य थकी उसके सुत की ॥ ७ ॥

गृह राक्षस राजित सुन्दर थे;
शिवलोक समान मनोहर थे ।
भ्रमकारक थे शरदाम्बुद से;
पर दायक थे मन को मुद के ॥ ८ ॥

फहराती थीं वहाँ पताकायें भी ऐसी,
सुर-पुर की भी शान न हो सकती हैं वैसी ।
मानो पंखे झूल रहे हैं लङ्का सिर पर,
या हैं वे कह रहीं "शत्रुओ ! जाओ फिरकर" ॥ ९ ॥

लङ्कापुर की सुदृढ़ देख हनुमान बनावट,
और राक्षस के सहित देख कर सैन्य-सजावट,
उनके छक्के छूट गये, आ गया पसीना;
कपि के मन की शक्ति हुई दुश्चिन्ता-पीना ॥१०॥

"पहले वानर कटक यहाँ कैसे आवेगा !
या आवे भी तदपि नहीं कुछ फल पावेगा !

कहीं झरोखे कटे हुए हैं;
कहीं चौतरे पटे हुए हैं।
फूल बिछे हैं किसी भवन में;
सुरभि सना है सदा पवन में ॥१७॥

लङ्केश्वर का कहीं भवन है;
होता उसका कहीं स्तवन है।
कहीं मल्ल व्यायाम-निरत हैं;
सभी वहाँ पर शोक-विरत हैं ॥१८॥

गहनों की झनकार कहीं है;
गीतों की भरमार कहीं है।
वेद-ध्वनि भी कहीं कहीं है;
भीरु एक भी कहीं नहीं है ॥१९॥

कहीं यज्ञशाला, कहीं अश्वशाला,
कहीं युद्धशाला बनी है विशाला।
कहीं पाठशाला, कहीं धर्मशाला,
कहीं चित्रशाला, कहीं शिल्पशाला ॥२०॥

पशुओं की हिंसा करते हैं कहीं निठुर रजनीचर;
चिड़ियों के पर नोच रहे हैं निर्दय निलज कहीं पर।
कच्चे पक्के मांस कहीं पर बिखरे पड़े हुए हैं;
कहीं वायु दुर्गन्धित करते हैं, जो सड़े हुए हैं ॥२१॥

कहीं विविध पक्वान्न पड़े हैं, कहीं विविध मीठे फल हैं,
स्वर्ण-घटों में कहीं मद्य भी रखा हुआ विमल है।

दण्ड, कवच और तरकस धारण करने वाले सौ-सौ सैनिको
रहते हैं। इनकी भी संख्या इतनी ही जान पड़ती है। यदि
विश्वास न हो तो जाँच लो।

ऋषिकुमार—(शिलाखण्ड पर बैठने और 'लव' से गले मिलने
नहीं, कुमार, तुमने ठीक कहा। ऋषिराज ने भी अश्व
के घोड़े का ऐसा ही वर्णन किया था।

एक ऋषिकुमार—तो यह घोड़ा इस तपोवन में इस प्रक
किसलिए विचर रहा है ?

लव—किसलिए ! विश्वविजयी क्षत्रिय इसी प्रकार अपन
वीरता की परीक्षा करते हैं।

(नेपथ्य से आवाज आती है)

[यह घोड़ा रावण-वंश के नाशक, वीरों के सिरमौर, रघुकुलभूषण रामचन्द्र के अश्वमेध का है। इसके द्वारा, वीरों को युद्ध का निमन्त्रण दिया जाता है। जिसकी बाहुओं में बल हो, वह इस घोड़े की गति को रोक दे।]

लव—(क्षणिक रुककर) कैसे ललकारने वाले ये शब्द हैं ! इन्हें सुनकर कौन वीर-हृदय शान्त रह सकता है ?

(पुनः नेपथ्य में)—[यदि किसी को संसार-प्रसिद्ध वीर महाराज रामचन्द्र की वीरता स्वीकार न कर अपनी मृत्यु बुलानी हो, तो वह इस घोड़े को छेड़े।]

लव—(ध्यान से सुनकर) क्या कहा ? क्या तुम पृथ्वी को वीरों से रहित समझते हो ? क्या पृथ्वी निःक्षत्र हो गयी ?

(फिर नेपथ्य से)—[तब महाराज के सामने अड़ने वाला
र कौन है ?]

दूसरा दृश्य

(सुमन्त के साथ चन्द्रकेतु का प्रवेश)

चन्द्रकेतु—हे आर्य सुमन्त, देखो तो; यह वीर बालक, जिसके सिर की पाँच जटायें शीघ्रता से डोल रही हैं—जिसका मुख-मण्डल क्रोध से तमतमा आया है, किस प्रकार हमारे सैनिकों का संहार कर रहा है।

सुमन्त—हे राजकुमार, देवता और राक्षसों के बल को भी लज्जित करने वाले इस वीर मुनि-बालक के युद्ध की गति को देखकर मुझे विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते हुए रामचन्द्र की याद आ जाती है।

चन्द्र०—(आप-ही-आप) इस एक शिशु पर इतने सैनिक एक साथ शस्त्रों का प्रहार करें, क्या यह लज्जा की बात नहीं है? तो भी यह अकेला सैनिक दल का नाश इस प्रकार कर रहा है, जिस प्रकार तालाब में कमल की डंठियों को मतवाला हाथी सहज ही नष्ट कर डालता है। (सुमन्त से) आर्य, शीघ्रता करनी चाहिये। हाय, व्यर्थ ही हमारे सैनिक इस प्रकार संहारे जा रहे हैं। उस क्रोधी बालक ने बात-की-बात में मेरे सैनिकों की लोथों से पृथ्वी को पाट दिया। अब यह अनर्थ मुझसे नहीं देखा जाता। (आगे बढ़कर) आर्य, दूतों ने इस बालक का क्या नाम कहा था?

सुमन्त—लव।

चन्द्र०—(ललकारकर) हे महायोद्धा लव, इन सैनिकों ने क्या बिगाड़ा है? यदि तुम्हें युद्ध की ही लालसा है तो इधर आओ। इन मूली-गाजरों को साफ़ कर क्या पा लोगे?

न मेरी इच्छा यज्ञ में विघ्न ही पहुँचाने की थी, किन्तु संसार के सभी वीरों का अपमान करनेवाले इनके शब्दों से अवश्य मुझे क्रोध आ गया।

चन्द्र०—तो क्या तुम पुरुष-सिंह श्रीरामचन्द्र के प्रताप का तेज सह नहीं सकते ?

लव—चाहे मैं सह सकूँ या नहीं, बात तो यह है कि जब रामचन्द्र स्वयं अहंकार आदि से रहित हैं, तब उनके अनुचर क्यों इस प्रकार राक्षसी भाषा का प्रयोग करते फिरते हैं ?

सुमन्त—हे तापसकुमार ! आपने सैनिकों के संहार के द्वारा अपना बल दिखलाया है अवश्य; किन्तु तेजस्वी परशुराम का दमन करने वाले वीर श्रीरामचन्द्र के विषय में बढ़-चढ़कर बात करना उचित नहीं।

लव—(हँसकर) अजी, राजा ने यदि ब्राह्मण परशुराम को अपनी वचन-वीरता से हराया हो तो इसमें उनकी वीरता का घमण्ड क्या ?

चन्द्र०—आर्य ! बस करो। अधिक प्रश्नोत्तर की क्या आवश्यकता है ? रघुकुल-तिलक श्रीरामचन्द्रजी की कीर्ति से सातों लोक प्रकाशित हैं।

लव—(अनादर के साथ ताना मारता) हाँ जी, रघुवीर की महिमा और चरित्र को कौन नहीं जानता ?

चन्द्र०—(रोष में आकर) मुनिकुमार ! सचेत होओ, होश करो, तुम किसकी मर्यादा का अपमान कर रहे हो।

लव—(जोश से) राजकुमार ! किस पर गर्मी दिखाते हो ? आँखें दिखा कर इस तपोवन से चले जाने की आशा छोड़ देना।

१ बालक—भैया कुश ! जिस कौतुक से लव ने, अपनी वीरता का अभिमान करनेवाले उस राजकुमार को निरस्त्र किया, जो सेना का मुखिया जान पड़ता था। वह आया तो था बड़े दिमाग से, मगर बेचारा दो-चार बाण भी न चला सका।

(घबराये हुए एक बालक का प्रवेश)

आया हुआ बालक—मित्र कुश ! यहाँ क्या कर रहे हो ? क्या सोच रहे हो ? जाँच और विचार करने का समय नहीं है। लव ने ऐसा भयानक संग्राम छेड़ा है कि उसका फल अच्छा नहीं जान पड़ता।

कुश—(सावधान हो कर) क्या समाचार है ? क्या लव को और किसी से युद्ध छेड़ना पड़ा ?

बालक—युद्ध छेड़ना पड़ा ! भयानक दृश्य है ! शत्रु-सेना प्रबल वेग से उमड़ पड़ी है, एक-से-एक योद्धा लव से सामना कर रहे हैं। हथियारों के बादल को अकेले लव ही अपने बाणों की आँधी से पल में उड़ा देता है। राजकुमार के बाद 'शत्रुघ्न' नामक वीर को उसने परास्त किया। फिर वह 'लक्ष्मण' नामक एक महारथी से भिड़ा। उस पर भी विजय पायी। तब महाबली 'भरत' आगे आये हैं। अब भैया लव की सहायता करो। देर करने का अवसर नहीं है।

कुश—भाई, पहुँचने में देर जो कुछ हो, शत्रु-सेना के विनाश में अब देर न समझो। जाओ, तुम लोग गुरुजी को सूचना दे दो। मैं चला—अभिमानी क्षत्रियों का काल रणक्षेत्र की ओर बढ़ा। अभिमानियो ! सावधान ! प्राण की ममता हो तो मुँह मोड़ लो; पतङ्ग की तरह मेरे क्रोध की ज्वाला में न जलो; चेतो,

राम—(शान्त भाव से मुस्कराकर) मुनिबालको। आप दोनों का क्या नाम है? आप किसके पुत्र हैं?

कुश—वीर शिरोमणि, हमारे नाम-धाम से आपको क्या मतलब? व्यर्थ की बातों से युद्ध को क्यों टालते हो?

राम—वंश-परिचय के बिना मैं युद्ध नहीं कर सकता।

कुश—रणक्षेत्र में ऐसी बातें कायरता प्रकट करती हैं। अपना धनुष सँभालो और यज्ञ के घोड़े को छुड़ाने के लिए युद्ध करो। सेना तुम्हारी राह देख रही है, उसे झटपट युद्ध की आज्ञा दो।

(लव और कुश अपना अपना धनुष सम्हालते हैं, ऋषि-बालकों के साथ वाल्मीकि का प्रवेश)

वाल्मीकि—पुत्रो, ठहरो। शान्त होओ! तुम्हारे सामने महाराजा रामचन्द्र खड़े हैं। उनके चरण-कमल में अपना सिर झुकाओ। (रामचन्द्र से) हे सूर्य-कुल-दीपक, ये दोनों बालक आप ही के प्रिय पुत्र हैं (रामचन्द्र सिर झुका लेते हैं); आप इनके अपराध क्षमा करें।

रामचन्द्र—(आदर-सहित चरण-वन्दना करके) मुनिराज, इस भेद को खोलने के लिए यह दास आपका अत्यन्त कृतज्ञ है। (लव और कुश को गले लगाते हुए) आओ वीर पुत्रो, हृदय को शान्ति दो। तुम रघुकुल के भूषण हो। तुम्हारी माता धन्य है।

वाल्मीकि—रघुकुल के अलङ्कार, अब आप सैनिकों को आज्ञा दें, वे लौट जायँ; आप भी जाकर यज्ञ पूरा करें।

रामचन्द्र—मुनिवर, यज्ञ का सारा भार अब आप पर है। आप ही की कृपा पर उसकी समाप्ति है। बड़ी दया हो यदि

४. सैनिकों की किन बातों से उत्तेजित होकर लव ने घोड़े की गति को रोका था? और उसने किस प्रकार से शत्रुघ्न, लक्ष्मण और भरत को पराजित किया था?

५. मर्यादा पुरुषोत्तम राम के हृदय में सीता के वियोग का दुःख था? किन वाक्यों से मालूम होता है?

६. रामचन्द्र को यह किस प्रकार मालूम हो सका था कि लव और कुश उन्हीं के पुत्र हैं?

७. उपसर्ग किसे कहते हैं? और इसका प्रयोग शब्दों के किस ओर होता है? तथा किन शब्दों के साथ इनका प्रयोग हो सकता है?

१२—चाय

[आजकल हमारे देश में चाय पीने का चलन बहुत हो रहा है। कुछ दिनों से तो शहरों में ही नहीं, देहातों तक में चाय के प्रचार का काम 'इन्डियन टी सेस कमेटी' के द्वारा हो रहा है। यह चाय क्या है, कहाँ होती है और इसका क्या उपयोग होता है, इसके प्रयोग से क्या हानियाँ होती हैं—इन सब विषयों पर इस पाठ में अच्छी तरह विचार किया गया है। इसके लेखक श्री० दयाशङ्कर 'सुहृद' हैं।]

चाय, चा, चाह ये सब नाम चाय के ही हैं। देश में देखा-देखी इस समय इसका प्रचार खूब ही बढ़ रहा है। आजकल यह भी हमारे नित्य खाने पीने के पदार्थों के समान एक आवश्यक

हानि नहीं, पर चाय में थोड़ी देर हो जाने से व्याकुल हो उठते हैं। आजकल के नव-शिक्षित बाबू लोग तो चाय न पीने की आदत को योग्यता की कमी ही मानते हैं।

जापान-देश की तरह हमारे देश में भी चाय आतिथ्य-सत्कार की वस्तु बनती जाती है। हम यही पिलाकर मिलने को आये हुए मेहमान का भी सत्कार करते हैं। चाय की पार्टियाँ (भोज) भी हो जाने लगी हैं। शीत-प्रधान देशों में, जहाँ बहुत सी मादक और गर्म वस्तुओं का व्यवहार होता है, यदि चाय के इस्तेमाल से कुछ लाभ होता हो तो संभव है। लेकिन भारत-जैसे उष्ण देशों में तो यह कभी गुणदायक नहीं हो सकती। मगर शीत-प्रधान देशवासी डाक्टर भी चाय का गुणकारी होना कभी स्वीकार नहीं कर सकते।

इंगलैंड की वेटरसी-म्युनिसिपैलिटी के डॉक्टर ने जाँचकर बतलाया है कि उसके महल्लों में हजारों स्त्रियों के जो ज्ञान-तंतु खराब हो गये हैं, उसका कारण चाय का व्यसन है। अमेरिका के न्यूयार्क नगर में प्रसिद्ध डाक्टर जान सिंडिल ने चाय के विषय में कुछ परीक्षाएँ प्रकाशित की हैं। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि आधा सेर चाय से १७,००० खरगोश मर सकते हैं। अच्छी तरह पकायी हुई चाय की केवल दस बूँदें ही एक मजबूत से मजबूत खरगोश के लिए काफी प्राण नाशक हैं। साधारणतः एक मनुष्य एक पौंड चाय तीन महीने में पीता है। इस हिसाब से वह जितना चाय पीता है, उतनी चाय से १७५ खरगोश का जीवन नष्ट हो सकता है। चाय में एक प्रकार का मादक-पदार्थ पाया जाता है। इसलिए चाय से सिवा हानि के कोई लाभ नहीं होता।

दूसरी तरफ, लोहे के टुकड़े रखे गये। [illegible]
पहले से थे। उनसे पूछने पर मालूम हुआ, [illegible]
यहाँ हमारा वज़न हो रहा है।

अब हम जिस नयी जगह में पहुँचे, [illegible]
सैकड़ों आदमी दौड़-धूप कर रहे थे [illegible]
ऐसी कर्कश आवाज़ आ रही थी कि [illegible]
हम कुछ सोच ही रहे थे कि [illegible]
आ पड़ी। ऊपर और [illegible]
खेतों में दिखायी देते थे। यहाँ [illegible]
आदमी एक लम्बी सी नाली में [illegible]
था। हम ठिठुरे जा रहे थे। [illegible]
सामना करना था!

दो दिन बाद हमें एक [illegible]
उसकी बेदर्दी देखकर हम [illegible]
गये थे, सब हमसे अलग [illegible]
सामना कर लेने पर भी हमें [illegible]
एक लोहे के लम्बे-से [illegible]
खाते खाते-खाते हम [illegible]
सारी वज़न ऊपर से हमें [illegible]
गये। हम जो [illegible]
पत्तियों से बाँधकर हम [illegible]
की गाँठ कहने लगे।

इसके बाद हमारी [illegible]
गाड़ी में हम सब भर दिये [illegible]

३. आजकल भारत में चाय का प्रचार क्यों अधिक बढ़ रहा है ?
४. चाय पीने से शारीरिक और और मानसिक शक्तियों में क्या प्रभाव पड़ता है ?
५. चाय पीने वालों की जठराग्नि क्यों खराब हो जाती है ? उनके पेशाब में किस दूषित पदार्थ की अधिकता पायी जाती है ?
६. चाय पीने वालों में कौन कौन से रोग पाये जाते हैं ?
७. चाय पीने की आदत कैसे छुड़ायी जा सकती है ?
८. उपसर्ग कितने होते हैं ? 'हार' शब्द के साथ में उपसर्ग लगा देने से उसके अर्थ में क्या भिन्नता पायी जाती है ?

१३—सावन

[यह कविता बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर बी. ए. रचित है। आपका जन्म काशी में भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी सम्वत् १९२३ को और शरीरान्त हरिद्वार में आषाढ़ कृष्ण तृतीया सम्वत् १९८९ में हुआ। रत्नाकर जी अयोध्या राज्य में नौकर थे। हिन्दी संस्कृत के अतिरिक्त फारसी के भी विद्वान थे। प्राचीन हिन्दी काव्य के भारी मर्मज्ञ थे, कई पुराने काव्यों का सम्पादन किया था। उनकी बिहारी सतसई की टीका बिहारी रत्नाकर बहुत प्रसिद्ध है। वे ब्रज-भाषा के सर्वमान्य कवि थे। हरिश्चन्द्र, उद्धव शतक, गंगावतरण, रत्नाकर, वीराष्टक आदि उनके बहुत प्रसिद्ध काव्य हैं। उन्होंने बहुत सी फुटकर कविताएँ भी लिखी हैं। रत्नाकर जी मिलनसार, सहृदय और सज्जन पुरुष थे। कविता के पारखी और प्रेमी थे।]

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो—सुर-मुनि-मन मोहै, 'जेहि प्रभाव नहिं बरत नेकु दावा अरु 'विषधर'। समस्त अनुराग, बनराजन।
३. इन शब्दों के शुद्ध रूप बतलाओ—प्रफुलित, मिरदंग, भाँति, अतिसय, छिति, सिंगार-हास, और मत।
४. बरसात में वृन्दावन की शोभा का वर्णन करो।
५. दामिनि, घन और कामदेव के पर्यायवाचक शब्द लिखो।
६. इस कविता को याद करके सुनाओ।
७. प्रति, आ और उप उपसर्ग लगाकर पाँच-पाँच शब्द तैयार करो।

१९—न्यायी नौशेरवाँ

[इस पाठ के लेखक पण्डित पद्मसिंह शर्मा का जन्म बिजनौर ज़िले के नायक नगला गाँव में सन् १८७७ में और अन्त भी वहीं सन् १९३२ में प्लेग से हुआ था। शर्माजी गुरुकुल, काँगड़ी और महाविद्यालय, ज्वालापुर में अध्यापक रह चुके थे। वे फ़ारसी, उर्दू, संस्कृत और हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे। उन्होंने बिहारी की सतसई पर 'सञ्जीवन भाष्य' नामक टीका लिखी है। उसकी भूमिका बहुत विद्वत्तापूर्ण है। इस पर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से १२००) का मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला था। आपके कुछ निबन्धों का संग्रह 'पद्मपराग' नाम से प्रकाशित हुआ है। 'हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी' उनकी एक और पुस्तक है। शर्माजी बड़े विनोद-प्रिय, और स्पष्टवक्ता थे। उनकी

रोशनीवालों का यह ख्याल किसी हद तक ठीक हो, और यह भी हकम हो कि पहले यहाँ हुकूमत का पार्लिमेंटरी तरीक़ा बिल्कुल आजकल की तरह कभी जारी न था। यद्यपि बहुत से विद्वानों ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि पुराने भारत में भी इस समय के ढङ्ग से ही मिलता-जुलता प्रजातन्त्र-प्रणाली का शासन भी प्रचलित था। यहाँ का पुराना शासन इस समय के प्रजातन्त्र-शासन से भिन्न प्रकार का था, या बिल्कुल ऐसा ही था और यह इससे अच्छा था, या बुरा, इस विषय पर हम यहाँ विवाद नहीं करना चाहते। यहाँ का पुराना शासन-प्रकार चाहे किसी ढङ्ग का था पर उसमें यह बात नहीं थी, जैसा कि आजकल की नयी रोशनी के परवाने कितनेक महाशयों का ख्याल है कि "भारत के पुराने शासक निरे 'गबरगण्ड राजा' के ह्रास के होते थे, न्याय में उनकी इच्छा ही सब कुछ थी।" पुराने इतिहासों में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जिनसे अच्छी तरह सिद्ध होता है कि न्याय के लिए प्रजा की पुकार पर पूरा ध्यान दिया जाता था, साधारण से साधारण और तुच्छातितुच्छ व्यक्ति भी कभी-कभी न्याय के बल पर बड़े-बड़े सम्राटों के सामने डट जाते थे और उनके न्याय-सङ्गत पक्ष से उन स्वच्छन्द शासकों को पराजित होना पड़ता था। आज हम ऐसा ही एक पुराना ऐतिहासिक उदाहरण पाठकों के सामने रखना चाहते हैं, जिसकी मिसाल बीसवीं सदी के पार्लिमेंटरी, रिपब्लिक या प्रजातन्त्र-प्रणाली के शासन में भी शायद ही कहीं मिले। यह घटना एशिया खण्डान्तर्गत फ़ारस (ईरान) देश के सुप्रसिद्ध बादशाह 'नौशेरवाँ-आदिल' के सम्बन्ध की है।

हुए धुएं से मैला महल, नौशेरवाँ के न्याय की ममता को और उसके शशि-शुभ्र यश के प्रकाश को अब तक संसार में फैला रहा है। नौशेरवाँ का वह आकाश को छूनेवाला महल और बुढ़िया की वह मुर्दा हुई झोपड़ी, दोनों ही समय पर आकर ख़ाक में मिल गये; बादशाह और बुढ़िया भी कभी के संसार से बिदा हो गये, पर उनकी यह न्याय-कहानी अबतक ज़िन्दा है। ऐसे ही सत्कार्यों ने नौशेरवाँ के नाम को अजर-अमर बना दिया है, इसीलिए वह आदर्श "आदिल" (न्याय करनेवाला) कहलाता है—शेख़सादी ने इसीलिए यह कहा है और बिल्कुल ठीक कहा है :—

क़ारूँ* हिलाक शुदके चहल ख़ाना गंज दाश्त।
नौशेरवाँ न मुर्दके नामे—निको गुज़ाश्त॥

क़ारूँ हिलाक हो गया—मर गया, यद्यपि उसके पास चालीस कोठरियाँ ख़ज़ाने की थीं, नौशेरवाँ नहीं मरा, क्योंकि वह अपना नेक नाम दुनिया में छोड़ गया।

पाठ-सहायक

आन की आन में = शीघ्र ही, जितनी जल्दी हो सके। रहम = दया। प्रचलित = प्रसिद्ध। शुभ्र = स्वच्छ, सफ़ेद। ख़ाक = धूल। बिकुन (फ़ारसी) = मार डाले। पार्लियामेंटरी = लोक-मत या प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधियों के मत के अनुसार शासन।

---

* यह फ़ारस देश का एक बहुत प्रसिद्ध राजा था। इसके पास, कहते हैं बहुत बड़ा कोष था।

। इस अवतरण में शुद्ध हवा की आवश्यकता और उसकी उपयोगिता अच्छा प्रकाश डाला गया है।

बाबू कृष्णानन्द गुप्त झाँसी ज़िले के चिरगाँव कस्बे में रहते हैं। ये बहुत अध्ययनशील और अनुभवी लेखक हैं। आपने कई कहानियाँ लिखी हैं, जिनका संग्रह 'अंकुर' नाम से छपा है और 'प्रसाद के दो नाटक' नामक समालोचना की पुस्तक लिखी है।]

जाड़े के दिन थे। शान्ता और सन्तू बैठक में बैठे हुए आग ताप रहे थे। शान्ता ने कहा, 'भैया, आज तो बड़ी ठंडी हवा चल रही है। अच्छा, यह दूसरी खिड़की भी बन्द कर दूँ ?'

सन्तू—हाँ, बन्द कर दो।

सन्तू के कहने पर शान्ता ने उठकर खिड़की बन्द कर दी। इतने में मास्टर साहब आये। कमरे में आकर उन्होंने देखा कि अँगीठी धधक रही है और उसके धुएँ से कमरा भरा हुआ है। उन्होंने सन्तू से कहा, "सन्तू, जल्दी से खिड़कियाँ खोल दो। देखो तो, कमरे में कितना धुआँ भरा हुआ है। यह सब तुम्हारे पेट में जाता होगा"।

सन्तू ने चुपचाप एक खिड़की खोल दी।

मास्टर साहब ने कहा—दूसरी खिड़की भी खोल दो।

सन्तू—मास्टर साहब, आज तो बड़ी ठंडी हवा चल रही है।

मास्टर साहब—नहीं, उस खिड़की को भी खोल दो। मैंने तुमसे कितनी बार कहा है कि हमें खिड़कियाँ बन्द करके नहीं बैठना चाहिये। और इस अँगीठी को भी यहाँ से हटा दो। अभी इतना जाड़ा नहीं पड़ता।

है और फिर कारबोनिक एसिड गैस के रूप में बाहर निकलता है। प्रत्येक बार जब हम साँस लेते और छोड़ते हैं तब ऐसा ही होता है। ऑक्सिजन जलानेवाली गैस है। हमारे फेफड़ों में कारबन नाम का जो पदार्थ हर घड़ी बनता रहता है, यह उसको जलाकर कारबोनिक एसिड गैस बना देती है। इसी प्रकार ऑक्सिजन आग को भी जलाता है। यदि ऑक्सिजन न हो तो आग नहीं जल सकती। हम जितनी आग जलाते हैं उतनी ही ऑक्सिजन खर्च होती है और जितनी ऑक्सिजन खर्च होती है उतनी ही कारबोनिक एसिड गैस बनती है। यह कारबोनिक एसिड गैस जीवधारियों के लिए बड़ी घातक है। हम इसमें एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते।

मन्नू—मास्टर साहब, एक बात मेरी समझ में नहीं आयी। आप कहते हैं कि प्रत्येक जीवधारी अपनी साँस के साथ कारबोनिक एसिड गैस छोड़ता है। आग जब जलती है तब वह भी कारबोनिक एसिड गैस बनाती है तब तो इस दुनिया में अब तक इतना कारबनिक एसिड गैस हो गया होगा कि हमारा जीवित रहना एक आश्चर्य की बात है।

मास्टर साहब—सचमुच ही यह आश्चर्य की बात है। जब हम भी कारबोनिक एसिड गैस बनाते हैं, आग भी कारबोनिक एसिड गैस बनाती है तब हम ऑक्सिजन की कमी के बिना मर क्यों नहीं जाते? किन्तु ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र है। उसने हमें रोज ताजी और नयी ऑक्सिजन देने का ऐसा सुन्दर प्रबन्ध कर रखा है कि उसके कौशल की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। किन्तु हम लोग ऐसे मूर्ख हैं कि इस ऑक्सिजन को

मास्टर साहब—इतना क्यों अकुलाती हो ? मैं सब बताता हूँ। वृक्षों की जड़ें और पत्तियाँ ही उनके मुँह हैं। वृक्षों की पत्तियों में छोटे-छोटे छेद होते हैं। इन्हीं छेदों के द्वारा वे हवा में से अपना भोजन खींचते हैं। शान्ता, तुम्हें जिस तरह सब मिठाइयों में जलेबियाँ पसन्द हैं, उसी तरह पेड़ों को सब गैसों में कारबन पसन्द है। किन्तु यह कारबन आता कहाँ से है ? अच्छा, क्या तुम जानते हो कि कारबोनिक एसिड गैस क्या है ? कारबोनिक एसिड गैस कारबन और ऑक्सिजन का जोड़ा है। पेड़ कारबन और ऑक्सिजन के इसी जोड़े में से अपने लिए कारबन खींच लेते हैं और बाक़ी क्या बच रहता है ? ऑक्सिजन। और इसी ऑक्सिजन को हम साँस के द्वारा भीतर खींचकर कारबन-समेत बाहर फेंकते हैं। यह कारबन ऑक्सिजन के साथ इस तरह मिल जाता है कि उसको अलग करना हमारी शक्ति के बाहर है। इस काम को पेड़ ही कर सकते हैं, क्योंकि उन्हें कारबन खाना पड़ता है। इस प्रकार हम हर घड़ी कारबोनिक एसिड गैस बनाया करते हैं और पेड़ उसको हर घड़ी कारबन और ऑक्सिजन में अलग किया करते हैं। देखा सन्तू, रोज़ ताज़ी-ताज़ी ऑक्सिजन मिलने का यह कैसा सुन्दर प्रबन्ध है ! अब तुम समझ गये होगे कि हमें खुली जगह में क्यों रहना चाहिये।

सन्तू—हाँ, मास्टर साहब, समझ गया।

शान्ता—सन्तू भैया समझ गये होंगे, किन्तु मैंने तो कुछ भी नहीं समझा।

मास्टर साहब—तू तो कभी कुछ नहीं समझती। अच्छा, सुन। हमने तुम्हें बताया है कि शुद्ध हवा के सौ भाग में २१ भाग

सन्नू—तब तो मास्टर साहब, हमें मुँह ढककर कभी नहीं सोना चाहिये।

मास्टर साहब—हाँ, जो लोग मुँह ढककर सोते हैं उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। दिन में भी हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि हमें सदा ताजी हवा साँस लेने को मिलती है। साँस लेने में हमें एक बात का और ध्यान रखना चाहिये—बहुत से लोग मुँह से साँस लेते हैं; किन्तु ईश्वर ने मुँह खाने के लिए बनाया है, साँस लेने के लिए नहीं बनाया। हमें सदा अपनी नाक से साँस लेना चाहिये।

सन्नू—मास्टर साहब, मुँह से साँस लेने से क्या कुछ हानि होती है?

मास्टर साहब—हाँ, मुँह से साँस लेने से हवा में मिले हुए धूल के कण और बीमारियों के बीज बिना किसी रोक-टोक के फेफड़ों के भीतर चले जाते हैं और हमें बीमार कर देते हैं। पर नाक से साँस लेने में यह बात नहीं होती। नाक के बाल धूल के कणों को भीतर नहीं जाने देते। वे हवा के लिए छलनी का काम करते हैं। नाक से साँस लेने में एक लाभ और है। जो लोग सदा नाक से साँस लेते हैं उन्हें सर्दी लगने का डर नहीं रहता। क्योंकि ठंडी हवा नाक के मार्ग से गर्म होकर फेफड़ों में जाती है। अब तुम समझ गये होगे कि हमें अपनी नाक से साँस क्यों लेनी चाहिये और मुँह से क्यों न लेनी चाहिये। एक बात और याद रक्खो कि साँस सदैव गहरी लेनी चाहिये।

सन्नू—क्यों?

मास्टर साहब—यह समझने के पहले तुम्हें अपने फेफड़ों के

और थोड़ा-सा ज़ोर लगाकर हवा को फेफड़ों के और भी ऊपर ले आओ। इस अन्तिम गति में तुम्हें पहले-पहल अधिक ज़ोर नहीं लगाना चाहिये। जब इस तरह हवा से तुम्हारे फेफड़े खूब अच्छी तरह भर जायँ तब उसको एकाध सेकंड के लिए भीतर ही रोक रखो और फिर धीरे-धीरे बाहर निकाल दो। किन्तु बाहर निकालते समय तुम्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि फेफड़ों की सारी गन्दी हवा बाहर निकल जाय।

मन्नू—मास्टर साहब, आपने हवा भीतर रोक रखने के लिए क्यों कहा है?

मास्टर साहब—यह तो साधारण-सी बात है। तुम हवा को जितनी देर भीतर रोक रखोगे तुम्हारा रुधिर उतना ही अच्छी तरह से उसमें से ऑक्सीजन खींच सकेगा। इसमें पूछने की कौन-सी बात थी? किन्तु आरम्भ में तुम्हें इस प्रकार हवा रोकने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये; क्योंकि उससे फेफड़ों को हानि होने का भय है। किन्तु धीरे धीरे खूब गहरी साँस लेकर धीरे-धीरे उसको अच्छी तरह बाहर निकाल देने में कभी किसी को कोई हानि नहीं पहुँच सकती।

मन्नू—क्यों मास्टर साहब, यह अभ्यास कब करना चाहिये?

मास्टर साहब—जब तुम्हें समय मिले, तभी। यदि तुम इस अभ्यास को आज ही से करना आरम्भ कर दोगे तो कुछ दिनों में तुम्हें इससे बड़ा लाभ होगा। शरीर सदा हरा भरा और फुर्तीला बना रहता है।

मन्नू—मास्टर साहब, मैं आज से ही पूरी साँस लेने का अभ्यास करूँगा।

१६ – सूक्तियाँ

[[illegible]]

रहिमन प्रीति सराहिए, मिले होत रँग दून।
ज्यों जरदी हरदी तजै, तजै सफेदी चून॥ १॥
रहिमन बहु भेषज करत, व्याधि न छाँड़त साथ।
खग मृग बसत अरोग बन, हरि अनाथ के नाथ॥ २॥
रहिमन बिगरी आदि की, बनै न खरचे दाम।
हरि बाढ़े आकास लौं, तऊ बावनै नाम॥ ३॥
रहिमन मनहिं लगाइ कै, देखि लेहु किन कोय।
नर को बस करिबो कहा, नारायन बस होय॥ ४॥

रहिमन विद्या बुद्धि नहिं, नहीं धरम जस दान ।
भू पर जनम वृथा धरै, पशु बिन पूँछ बिषान ॥१७॥
रहिमन विपदाहू भली, जो थोरे दिन होय ।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय ॥१८॥
रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं ।
उन ते पहिले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं ॥१९॥

पाठ-सहायक

निज = अपना । निरखि = देखकर । रहिला = (रुहिला) चना । नै = नम्र होकर । बिषान = सींग ।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ—याचकता, गोत, कूच, उपजाय, हित, पय, मुए, मुख ।
२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—मन मैला करना, गरीबी मेल करना ।
३. भगवान को बावन अंगुल का रूप क्यों धारण करना पड़ा था ? इस कथा को लिखो ।
४. इस संसार में कौन-कौन ऐसे प्राणी हैं जो अपने कुल की उन्नति से दुखी होते हैं ?
५. मनुष्य को इस संसार में जन्म लेकर क्या क्या करना चाहिये, जिससे उसकी कीर्ति फैले ?
६. इस पाठ के दोहे में कोई पाँच, जो तुम्हें बहुत प्रिय हों, याद करके सुनाओ ।

७. प्राचीन और नवीन विद्यालयों में तथा उनकी शिक्षा-प्रणाली में क्या अन्तर है ?

८. वेदों की पढ़ाई कब तक होती थी ? और अवकाश काल में विद्यार्थियों के अध्ययन के अन्य विषय और कौन-कौन थे ?

९. रक्षा-बन्धन कब होता है ? पुरोहित किस चीज़ की रक्षा बना कर यजमानों के हाथ में बाँधा करते थे ?

१०. श्रावणी को हयग्रीव-जयन्ती क्यों कहते हैं ?

११. संधियाँ कितने प्रकार की होती हैं ? उदाहरण सहित लिखो।

९—कपड़े की आत्म-कहानी

[यह लेख श्रीयुत श्रीगोपाल नेवटिया ने लिखा है। आप फतहपुर (जयपुर रियासत, राजपूताना) के निवासी मारवाड़ी वैश्य हैं। आप हिन्दी-साहित्य के विशेष प्रेमी हैं। आपने 'काश्मीर' नामक एक सचित्र वृहद् ग्रन्थ लिखा है, जिसमें काश्मीर का प्राकृतिक, भौगोलिक एवं सामाजिक वर्णन बहुत अच्छे ढंग से किया गया है। नेवटियाजी ने यूरोप की कहानियाँ, मुस्लिम साधक और कई अन्य पुस्तकें भी लिखी हैं। इन सब की भाषा की सफ़ाई और वर्णन की चतुरता सराहनीय है। यह आपके फुटकल लेखों में से है, जो समय-समय पर विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।]

हमारी कहानी बड़ी विचित्र है। हमने इतने ऊँच-नीच देखे हैं, जितने शायद ही किसी ने देखे हों। हमारा जन्म रुई से हुआ है।

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ।

* [illegible]
[illegible]

दुष्टों की ये पहचान हैं मन्नो ने बतायी।
ये देख नहीं सकते विभव-वृद्धि परायी॥

ऊदल को किसी रोज थे ये माहिल ने जताया।
"क्या जानो तुम्हें किसने पिता-हीन बनाया॥
माता को किया राँड़, सकल माल छिनाया।
तुम वीर बने फिरते हो, धिक्कार है काया॥
यदि वीर हो, निज बाप का बदला तो चुकालो।
पितु शत्रु का हनि दिल की उमङ्गों को निकालो॥

क्षत्री का नहीं धर्म है बलहीन को मारे।
निज गाँव की गलियों हि में शौर्य्य पसारे॥
पनघट पै बुरी दृष्टि से पनिहारी निहारे।
होली सी कभी लाँग, अजब माँग सँवारे॥
सामान्य प्रजा पर ही सकल शक्ति लगा दे।
ऊँचों के घृणा, नीचों के चित भीति जगा दे॥

जिस क्षत्री ने निज बाप का बदला न चुकाया।
पितु-शत्रु को हनि मातु का जियरा न जुड़ाया॥
जननी व जनम-भूमि का अपमान कराया।
निज वंश का, निज जाति का यश कुछ न बढ़ाया॥
उस क्षत्री का होना है न होने के बराबर।
जानो उसे एक धरा-भार सरासर॥"

... ही ऊदल के हुए नेत्र अँगारा।
... "तो किसने है मेरे बाप को मारा?"...

माहिल ने कहा, "मैंने सुना था जो उचारा।
निज मातु से जा पूछिये वृत्तान्त वे सारा॥"
यों दिल में कपट इनको कलिंगा ने सुझाई।
स्वच्छन्द महोबा में हटा चैन उड़ाई॥

ऊदल ने तुरत जाके स्वमाता को सुनाया।
"माहिल ने मुझे आज अजब भेद बताया॥
बतला दो मुझे किसने है यों राँड़ बनाया?
किसने है मेरे बाप को सुरधाम पठाया?
बतलाओ नहीं तू तो मैं भोजन न करूँगा।
सौगंद तेरी इस में गला काट मरूँगा॥"

देवल ने तुरत घोर की माहिल की बुराई।
फिर धीर-सहित पुत्र को यह बात सुनाई॥
"माहिल को नहीं जानता? है दुष्ट कसाई।
इस बात के सुनने की समैया नहीं आई॥
छोटा ही बयस का है अवस्था अभी तेरी।
यह हाल सुनाके अभी मरजी नहीं मेरी॥"

सुनते ही उदयसिंह* ने निज तेग निकाली।
हठ करके विकट क्रोध से हाथों में उठा ली॥
"बतलादे नहीं करता हूँ दुनिया अभी खाली।
बस "नहीं" कहो, मैंने इधर धर में देना ली॥

---

* ऊदल।

ऊदल ने जो पाया ज़रा आल्हा का इशारा ।
हाथी की तरह दर्प से यह बैन उचारा—
"करिया की खोपड़िया से जो टुकड़ न उड़ाऊँ ।
दसराज-सुवन आज से हर्गिज़ न कहाऊँ ॥"

मीरा ने झपट बाँदिया राजा की उतारी ।
की दौड़ के आल्हा ने 'पपीहा' पै सवारी ॥
देवा का बजी सिंगी* विकट नाद से भारी ।
मलखान ने वह खोपड़ा निज कर से उतारी ॥
देवल ने उधर खोपड़ी सीने से लगा ली ।
ऊदल ने स्वरक्षा के लिए सैफ़ निकाली ॥

सिंगी का सुना शब्द हुई सेन भी तैयार ।
इस ओर करिगा ने सुने सारे समाचार ॥
सेना लिये दम का गया रण-खेत में ललकार ।
औ' गूंज उठी खेत में हथियारों की झनकार ॥
इस यश की है सारी कथा तुमको सुनाना ।
भारत के युवक वीरों का है हृदय दिखाना ॥

देवल थी बनी दुर्गा तो भैरव-सा था मलखान ।
देवा का व मीरा का भी थोड़ा करो अनुमान ॥
तुम चाहते हो करना अगर उम्र की पहचान ।
भींजा हैं मसें†, सबको है मूछों ही का अरमान ॥

* सींगी । एक प्रकार की तुरही ।

† मस भींजना = छोटी-छोटी मूछें निकलना आरम्भ होना ।

[illegible] थे ये वीर धनाफर।
[illegible] दर्शी की तरह मरहठ्ठ॥
[illegible] के था हमें हवा पर।
[illegible] बस, देह धरा पर॥
[illegible] ऊदल की भी तलवार।
[illegible] की नदी पार॥

[illegible] पाउर से हुई पार।
[illegible] का टक है असवार॥
[illegible] थी विकट मार।
[illegible] में लगी मार॥
[illegible] थी तग के नीचे।
[illegible] रान-दुर्बीचे॥

बस [illegible] महा घोर घमासान।
ऊदल ने [illegible] के लिए प्रान॥
श्राल्हा ने [illegible] महाप्रस्थान +।
औ [illegible] बना युद्ध में मलखान॥
इस युद्ध में [illegible] ने भी हथियार उठाये।
'[illegible]' के सहित [illegible] से उड़ाये॥

ऊदल ने [illegible] का झपट शीश उड़ाया।
निज क्रोध के आवेश में भाले से बेधाया॥

* शिर। † जीव, प्राण। ‡ नैरकर।
+ यमलोक यात्रा। × टुकड़े से।

माता के हवाले किया गढ़ चोर का धाया ।
नौ लाख का यह हार भी रानी से छिनाया ॥
निज साथ 'विजय राज' को लिये मैन में आया ।
अति भक्ति सहित माता के पग शीश नवाया ॥

× × ×

इस भाँति युवक वीर ने निज पन को निबाहा ।
बदला लिया निज बाप का कर शत्रु का स्वाहा ॥

पाठ-सहायक

चुगलखोर = शिकायत करनेवाला । कर = लगान, टैक्स । युगल
= दो । कूच = धाड़, अन्दाज़, चटकस । आखेट = शिकार । सुमन =
। काया = शरीर । सोगंद = कसम खाना । सुघराई = चीकता ।
...वाई = मृदु बोलनेवाला, सखार । उर = हृदय । सुभग = सुन्दर । बैन =
वचन । आवेश = वेग, जोश ।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ :—मर्म, कमोद, बधार, पनिहारी, ग्रामीण, सहकार, बटुक-रूप, बधैया, जिगर, महाप्रस्थान, घमासान ।
२. अर्थ निकालो और अपने वाक्यों में प्रयोग करो :—दिल की उमंगें निकालना, जिगरा उड़ाना, भाँप लेना, लौटकर मुँह न दिखाना, अब इरादा भाई, शत्रु का स्वाहा करना ।

... और अरुण कौन थे ?

अगर जहाज़ों का मीठा पानी चुक जाय तो वे लोग क्या प्रबन्ध करेंगे ?

जहाज़ में यात्रियों को कवायद क्यों कराई जाती है ? और उस समय लोग किस तरतीब से खड़े किये जाते हैं ?

जहाज़ों में भोजन आदि का क्या प्रबन्ध रहा करता है और दिन में कितनी बार भोजन दिया जाता है ?

वहाँ का भोजन-क्रम क्या है ? और वहाँ किस क्रम से लोगों को भोजन की सामग्री दी जाती है ।

जहाज़ में सामान खरीदने का क्या क्रम है ? वहाँ किन-किन नियमों को पालन करना पड़ता है ?

जहाज़ से डाक आदि जाने का क्या प्रबन्ध रहता है ? तथा वहाँ किसी बात का पता लगाने के लिए क्या करना पड़ता है ?

२. इस पाठ में आये हुए कठिन और संदिग्ध छाँटकर उनकी एक सूची तैयार करो ।

२१—धुँआधार जल-प्रपात

[विन्ध्याचल से निकलनेवाली नदियों में नर्मदा कदाचित् सब सुन्दर प्राकृतिक दृश्य निर्माण करती है । जबलपुर के समीप भेड़ाघ को श्वेत पर्वतराजि के बीच से बहती हुई, कल निनादिनी नर्मदा सौन्दर्य संसार में अनुपम है । वहीं पर कई जगह ऊपर से गिरता हु नर्मदा का जल असाधारण सौन्दर्यपूर्ण जल-प्रपातों की सृष्टि क

"हैं" ! भरतजी ने दुख में माता की विधवा का मा ...
। अब तक माता कौशल्या ने बहुत सभाला था, नी बड़ाकर
थीं। पर रहा न गया। रो पड़ीं। घरमें कुहराम मच गया
र पड़ी आवाज सुनायी न देती थी। राजा दशरथ का मृत-देह
लायी गयी, भरत ने सारा हाल सुना। सिर धुना। हाय मार्ग
योध्या विपत्ति के महासागर में डुबाने का एकमात्र कारण मैं
हूँ और मेरे ही लिए कुमाता ने यह चक्र रचा है।
धिक्कार है ! मेरे जीवन को ! मेरे ही लिए भाई श्री रामचन्द्र वन
पधारे और पिता दशरथ स्वर्ग सिधारे। नहीं-नहीं, भरत छोटा
भाई, रामचन्द्रजी के चरणों का सेवक, राज का कदापि अधिकारी
नहीं, यह अनीति है, अधर्म है। भरत, तुच्छ संसारिक राज्य
के लिए नीति का खून न करेगा, कभी नहीं। भरत, राम का
राज्य राम को देगा। राज राम की है, इसमें किसका अधिकार ?

क्रिया-कर्म से छुट्टी पा भरतजी ने सारी प्रजा की एक सभा
की। क्या छोटे, क्या बड़े सभी शामिल थे। भरतजी ने स्पष्ट
शब्दों में नीति की बात निवेदन की कि, "राज राम का है। अब
राजा मर चुके हैं। वन से रामजी को मनाकर लौटाकर लाना
होगा और गद्दी पर बैठाना होगा। इसमें मैं सबसे बड़ा अपराधी
हूँ कि मेरे कारण ही सारे उपद्रव हुए। शायद भगवान जो मुझ
पातकी की बात न सुनें; पर प्रजा की पुकार धर्मात्मा राजा जरूर
सुनेंगे। सब कोई चलकर उन्हें मना लावें, यह मेरी राय है।"

प्रजा ने हर्षनादपूर्वक एकमत से भरत का मत स्वीकार
किया। मरी अयोध्या में मानो जान आ गयी। चित्रकूट की ओर
भीड़ का समुद्र बह चला।

बहकर जाते हैं और प्रकाश-स्तम्भ से टकराकर मर जाते हैं या उड़ते-उड़ते थककर समुद्र में गिर पड़ते हैं।

पाठ-सहायक

प्रचण्ड = तेज़। प्रकाश = रोशनी। [illegible] = [illegible]। [illegible] = [illegible]। [illegible] = साथ इकट्ठा करना।

अभ्यास

१. [illegible] — [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]।

२. [illegible] और अपने वाक्यों में प्रयोग करो — [illegible]।

३. समुद्र में प्रकाश-स्तम्भ क्यों बनाये जाते हैं? इनसे क्या लाभ होता है? ये किनके समय में किस प्रकार बनाये जाते हैं?

४. यदि समुद्र में प्रकाश-स्तम्भ न हों तो जहाज़ों को किन किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है? और इनसे बचने के लिए वे लोग क्या प्रबन्ध किया करते हैं?

५. [illegible]

किन-किन लक्षणों से तुम किसी व्यक्ति को शीलवान् कह सकते हो ?

कुलीन और अकुलीन आदमी की पहचान कैसे की जा सकती है ?

अपराध और मार्मी शब्दों के तत्सम रूप लिखो।

इस कविता के पाँचवें से बारहवें छन्द तक व्याख्या करो।

२६—चारु-चरित्र

[पण्डित बालकृष्ण भट्ट के निबन्धों के संग्रह 'साहित्य-सुमन' से यह लेख उद्धृत है। भट्टजी मालवीय ब्राह्मण थे। इनका जन्म संवत् १९०१ में प्रयाग में हुआ था। वे संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। हिन्दू-धर्म के अभिमानी थे। इस स्वधर्म-प्रेम के कारण प्रयागस्थ ईसाइयों के मिशन स्कूल और जमुना-मिशन स्कूल, जहाँ वे संस्कृत अध्यापक थे, के अधिकारियों से उनकी न निभी। बाद में वे प्रयाग के कायस्थ पाठशाला में संस्कृत शिक्षक हुए। भट्टजी प्रयाग से प्रकाशित 'हिन्दी प्रदीप' के सम्पादक भी थे। वर्षों वे बहुत घाटा सहकर भी इसे चलाते थे। तत्पश्चात् वे काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा के प्रकाशित 'हिन्दी शब्द-सागर' के सहायक सम्पादक नियुक्त हुए थे। इनके चलते शब्दों में लेख का विषय तथा भाव-विचार और व्यंग्य मुहावरेदार भाषा एवं शैली का प्रकाश और एक सुन्दर गुण है।]

मनुष्य के जीवन का महत्त्व जैसा चारु-चरित्र से सम्पादित होता है, वैसा धन, ऊँचे पद, ऊँचे दर्जे की तालीम इत्यादि के द्वारा नहीं हो सकता। समाज में जैसा गौरव, जैसी प्रतिष्ठा या

इज्जत जैसी और लोगों के बीच में शुद्ध चरित्रवाले का होता है, वैसी बड़े से बड़े धनी और ऊँचे-से-ऊँचे ओहदेवाले का कहाँ? बलवान या विद्वान को जो प्रतिष्ठा दी जाती है या सर्वसाधारण में जो यश या नामवरी उसकी होती है, उसकी स्पर्द्धा सब को होती है। कौन ऐसा होगा जो अपने वैभव, अपनी विद्या या पराक्रम से औरों को अपने नीचे रखने की इच्छा न करता हो? सम्भव है इसका अपवाद, केवल चारु-चरित्रवाले में अलबत्ता यह नहीं देखा जाता। वह यह कभी नहीं चाहता कि चरित्र के संबंध में—अर्थात् चरित्र क्या है इसकी नाप-जोख में—दूसरा हमसे आगे न बढ़ने पावे।

चाल-चलन का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। सूत्र के अनुसार देश या जाति के एक-एक व्यक्ति सम्पूर्ण देश या जाति के सभ्यता रूप शरीर का कारण है अर्थात् जिस देश या जाति में एक-एक मनुष्य अलग-अलग अपने चरित्र के सुधार में लगे रहते हैं, वह समग्र देश-का-देश उन्नति की अन्तिम सीमा तक पहुँचकर सभ्यता का बहुत अच्छा नमूना बन जाता है। नीचे-से-नीचे कुल में पैदा हुआ हो, बहुत पढ़ा-लिखा भी न हो, बड़ा सुभीते वाला भी न हो, न किसी तरह की कोई असाधारण बात उसमें हो किन्तु चरित्र की कसौटी में यदि वह अच्छी तरह कस लिया गया है तो उस आदरणीय मनुष्य का सम्भ्रम और आदर समाज में कौन ऐसा कमबख्त होगा जो न करेगा और ईर्ष्यावश उसके महत्व को मुक्तकण्ठ हो स्वीकार न करेगा? नीचे दरजे से ऊँचा उठने के लिए चरित्र की कसौटी से बढ़कर और कोई दूसरा जरिया नहीं है। चरित्रवान यद्यपि धन और बहुत

सका मानों सब बना है; कहीं पर किसी अंश में वह दरिद्र नहीं कहा जा सकता है।

एक बुद्धिमान ने इन बातों को पवित्र-चरित्र का मुख्य अङ्ग निश्चय किया है—स्पष्टता अर्थात् छल कपट का न होना, रुपये पैसे के लेन-देन में सफाई, बात का धनी और अपने वायदे का सच्चा होना, आश्रितों पर दया, मेहनत से न हटना, अपने निजी परिश्रम और पौरुष पर भरोसा रखना, अपने को बढ़ाकर न कहना। इनमें से एक-एक गुण ऐसा है जिस पर किताब की किताब लिखी जा सकती है। चारु चरित्र का संक्षिप्त विवरण इसने यह सुनाया। जिस भाग्यवान में चरित्र के पूर्ण अङ्ग हैं, उसका क्या कहना। वह तो मनुष्य के तन में साक्षात् देवता या सिद्ध योगी है। जिन बातों से हम में चरित्र आता है, उनमें से दो एक बातें भी जिसमें हैं, वह धन्य और प्रशंसा के योग्य है। हमारे नवयुवकों को चरित्र-पालन में विशेष सावधान रहना चाहिये। ऊँचे दरजे की शिक्षा बिना चरित्र के सर्वथा निरर्थक है। चरित्र सम्पन्न साधारण शिक्षा रख कर जितना उपकार देश या जाति का कर सकता है, उतना सुशिक्षित, पर चरित्र का छूछा, नहीं करेगा।

पाठ-सहायक

महत्व = बड़प्पन। चारु-चरित्र = सुन्दर चरित्र। तालीम = शिक्षा। सफलता = कामयाबी। उसूल = सिद्धान्त। ओहदा = पद। साक्षात् = प्रत्यक्ष रूप में।

शंकरानन्द ने बैजू को हृदय से लगाया और कहा—मैं
द राग दूँ जिससे तू अपने पिता की मृत्यु का बदला ले सके।
बैजू उछल पड़ा और बोला—कहाँ है वह राग?
शंकरानन्द ने कहा—उसके लिए दस वर्ष तपस्या
करनी होगी।
बैजू ने कहा—दस वर्ष क्या, मैं अपने अनन्त जन्म
हिंसा की वेदी पर बलिदान कर सकता हूँ। क्या केवल दस वर्ष
के पश्चात यह मिल जायगा?
शंकरानन्द ने कहा—हाँ।

(२)

ऊपर की घटना को बारह वर्ष बीत गये। बैजू बावरा
हो चुका था और गान-विद्या में दिन पर दिन आगे बढ़ रहा था।
उसके स्वर में जादू भर चुका था और तान में एक आश्चर्यमयी
मोहिनी आ गयी थी। गाता था तो पत्थर तक पिघल जाते और
पशु तक मुग्ध हो जाते थे। सुनने वाले स्तब्ध होकर खड़े रह
जाते थे। एक दिन शंकरानन्द ने हँस कर कहा, "मेरे पास जो
कुछ था, तुझे दे डाला।" बैजू हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया।
कृतज्ञता का भाव आँसुओं के रूप में बह निकला, चरणों पर
सिर रख कर बोला, "महाराज, आपका उपकार जन्म भर सिर
से न उतरेगा।" शंकरानन्द सिर हिलाकर कहने लगे, "यह नहीं,
कुछ और।"
बैजू ने कहा—महाराज कहें।
शंकरानन्द बोले—प्रतिज्ञा करो।

अकबर ने घंटी बजायी और तानसेन ने कुछ प्रश्न सङ्गीत-विद्या के सम्बन्ध में बैजू बावरा से किये। बैजू ने उचित उत्तर दिये और लोगों ने हर्ष से तालियाँ बजायीं।

बैजू बावरा ने सितार हाथ में लिया और जब उसके तार को हिलाया तब जनता ब्रह्मानन्द में डूब गयी और वृक्षों के पत्ते तक निःशब्द हो गये। बैजू बावरे की अँगुलियाँ सितार पर दौ रही थीं। उन तारों पर राग-विद्या निछावर हो रही थी औ लोगों के मन चकोर की नाईं उछल रहे थे। लोगों ने देखा औ आश्चर्य-चकित होकर रह गये कि हरिण छलाँगें मारते हुए आ और बैजू बावरे के पास खड़े हो गये। बैजू बावरा सिता बजाता रहा—बजाता रहा—बजाता रहा।

हरिण मस्त थे। बैजू बावरा ने सितार हाथ से रख दिय और अपने कण्ठ से फूल-मालाओं को उतार कर उन्हें पहन दिया। फूलों के स्पर्श से हरिणों को सुधि आयी और वे चौकड़ भरते हुए भाग कर वृक्षों में छिप गये। बैजू ने कहा, "तानसेन, फूल-मालाओं को यहाँ मँगवाइये, तब मैं आपको संगीत विद्या में पूर्ण मानूँ।"

तानसेन सितार साथ में लेकर अपनी पूर्ण प्रवीणता के साथ बजाने लगा। ऐसी अच्छी सितार उसने अपने जीवन-भर में न बजायी थी। आज उसने यह बजाया जो कभी न बजाया। मृत्यु की होड़ थी और सिरों की बाजी लग रही थी।

बहुत समय बीत गया। अँगुलियाँ दुखने लगीं। लोगों . . . को पसन्द नहीं किया। सूर्य और पटबीजने . . . क्या है!

बहुत चेष्टा करने पर भी जब कोई हरिण न आया तब नाज-बेग की आँखों के सामने मृत्यु नाचने लगी, [illegible] और लज्जा से मुख-मण्डल तमतमा उठा। वह चिल्ला कर बोला, "हे हरिण को भगवान् इधर का [illegible] था। [illegible] का स्वभाव नहीं था। मालूम है की अब [illegible]

हिंदु बालक मुसकाया और धीरे से बोला, "बहुत अच्छा [illegible] फिर [illegible] और फिर [illegible] हिंदु [illegible] के पास फिर [illegible] हरिण, [illegible] हुई थी और [illegible] हिंदु बालक ने [illegible] और [illegible]

[illegible]

[illegible]

हिंदु बालक ने कहा, "[illegible]

तानसेन बैजू बावरे के चरणों में गिर गया और दीनता से कहने लगा, "यह उपकार जीवन भर न भूलूँगा।"

बैजू बावरे ने उत्तर दिया, "बारह वर्ष की बात है। तुमने मुझे प्राण दान दिये थे, यह उसका बदला है।"

पाठ-सहायक

प्रभात = सवेरा, प्रातःकाल। दस्ताना = दिवाला। नवागत = नये आये हुए। अश्रु-परिप्लुत = आँसुओं से भीगे हुए। तरुण = जवान। राहगीर = रास्ता चलने वाले, बटोही।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ:—अभियोग, विलखना, नवाब, प्रतिहिंसा, स्तब्ध, वाटिका, दावानल, नूतन, श्रद्धा, तमतमा उठना।

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—अपने राग में मगन होना, घेरा डालना, मुँह ताकना, वज्र गिरना, रक्त सूख जाना, रक्त का घूँट पीकर रह जाना, पसीना-पसीना हो जाना।

३. तानसेन ने आगरे नगर में गाने वालों को क्या दण्ड देने की घोषणा करायी थी? और क्यों?

४. बैजू बावरा कौन था? वह इतना बड़ा प्रसिद्ध गायक कैसे हो गया? किसकी शिक्षा से वह इतना योग्य हुआ था?

५. बैजू के हृदय में प्रतिहिंसा की इच्छा क्यों पैदा हुई थी? वह किस प्रकार शान्त हुई?

६. बैजू ने गान-विद्या में तानसेन को किस प्रकार पराजित किया और अन्त में उसे प्राणदण्ड से क्यों मुक्त करा दिया?

७. इस पाठ को यह शीर्षक क्यों दिया गया है ?
८. समास किसे कहते हैं ? इस पाठ से आप दस ऐसे शब्द बताओ, जिनमें समास हो। विशेषणों (अथवा क्रिया) के रहते हुए किसी पद में समास हो सकता है या नहीं।

२८—श्रवण-कुमार

[यह कविता पण्डित गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' की रचना है। ये श्रावण शुक्ला त्रयोदशी, सम्वत् १९४० में हड़हा, ज़िला उन्नाव में पैदा हुए थे। ये नार्मल पास करके उन्नाव ज़िले के कई स्कूलों में अध्यापक और प्रधान अध्यापक रह चुके हैं। आजकल कानपुर में रहते और वहीं से 'सुकवि' नामक कविता सम्बन्धी मासिक पत्र का सम्पादन और प्रकाशन करते हैं। सनेहीजी उर्दू और हिन्दी दोनों में अच्छी कविता लिखते हैं। करुण रस की एवं राष्ट्रीय कविताएँ लिखने में उन्हें विशेष सफलता मिली है। आप 'त्रिशूल' नाम से भी कविताएं करते हैं। आजकल के सुप्रसिद्ध कवियों में आपकी गणना होती है। आपकी रचनाओं में त्रिशूल तरंग, प्रेम पचीसी, कुसुमाञ्जलि, कृषक-क्रन्दन आदि की विशेष ख्याति है।

श्रवण अपने माँ-बाप को एक बहँगी में बिठाकर तीर्थ यात्रा कराया करता था। एक रात वह उन्हें जंगल में छोड़कर तालाब से पानी भरने गया। उसकी तूँबी के डूबने पर जो आवाज़ हुई उसे जंगली हाथी की आवाज़ समझ कर शिकार के लिये गये हुए राजा दशरथ ने उसे शब्द-

वेधी बाण से मार दिया। श्रवण के कहने से राजा इनके माँ-बाप के पास गये। उसी समय का हाल नीचे वर्णित है।]

जननि-जनक दोनों सोचते थे पड़े यों—
"अब तक जल लेके लाल आया नहीं क्यों ?
दिल धड़क रहा है, काँपता है कलेजा ;
प्रिय सुत पर कोई आपदा आ पड़ी क्या !"॥ १ ॥

तब तक नृप आये, और होके अधीर ;
सविनय यह बोले "ल, पिये आप नीर।"
यह सुनकर चौंके और पूछा कि "कौन ?
मम तनय कहाँ है, क्यों हुआ आज मौन ?" ॥ २ ॥

"नृप अवधपुरी का, आपका दास मैं हूँ ;
वह सुरपुर में है, आपके पास मैं हूँ।
मृग-भ्रम कर मैंने बाण मारा अचूक ;
मुनिवर, अब तो है हो गयी घोर चूक।" ॥ ३ ॥

इस मम श्रवणों में जा लगी नृप-वाणी ;
वे थर-थर काँपे, रो पड़े युग्म प्राणी।
"प्रिय तनय हमारा आत्मजाधार हाय।
हम अति निरुपायों का वही था उपाय ॥ ४ ॥

जल गरल बना है पी चुके, पी चुके हैं,
बस अब न जियेंगे जी चुके, जी चुके हैं।
अब हम असहायों का रहा क्या सहारा !
सुर-सदन सिधारा जीवनालम्ब प्यारा ॥ ५ ॥

यह सुमति सिधाई और श्रेयानुरक्ति
रति अटल पिता की, निश्छल मातृ-भक्ति ॥ ११ ॥

कब हम दुखियों से प्रीति पाली न तूने;
तिल भर तक आज्ञा, पुत्र, टाली न तूने।
सुत ! प्रिय सुत ! बेटा ! वत्स ! प्राणावलम्ब :
अति विकल पिता हैं, खो रही प्राण अम्ब ॥ १२ ॥

यह मधुमय वाणी जीवनी-शक्तिदात्री,
फिर मम श्रवणों को दे सुना स्वर्ग-यात्री।
प्रिय सुत, तुम आओ या बुला लो हमें भी,
अब इस भव-बाधा से छुड़ाओ हमें भी ॥ १३ ॥

हम परम अभागे भोगते आप पाप;
हत-मति सुतघाती दें तुझे कौन शाप।
किस विकट व्यथा से जो रहे आज प्राण,
जब प्रिय सुत छूटा तो रहा कौन त्राण ॥ १४ ॥

दशरथ, शठ तेरा भी यही अन्त होवे;
सुत तज कर तू भी क्षुब्ध हो, प्राण खोवे।"
यह कह कर ज्योंही दीर्घ निश्वास छोड़ी;
फिर फिर न सकी जो शेष थी सांस छोड़ी ॥ १५ ॥

सुरपुर क्षण में ही ले गये स्वर्गदूत;
जननि-जनक पीछे, अग्रगामी सपूत।
सुरगण अगवानी के लिये दौड़ आये:
श्रवण-तनय-सेवा के गये गीत गाये ॥ १६ ॥

७. निम्नलिखित शब्दों से विभक्तियाँ अलग करो — शक्तिसम्पन्न, सुग्राम, मृदुवाणी, कोमलाकार, नयनविहीन, गुणग्राहक, दुग्धदर्शित, अबल-सबल-सेना।

२०.—स्विट्ज़रलैंड में जीवन

[यह ब्रिटिश पार्लियामेंट के भूतपूर्व सदस्य मिस्टर विल्फ्रेड वेलॉक के अँगरेज़ी में लिखे हुए लेख का अनुवाद है। 'विशाल भारत' नामक कलकत्ते से प्रकाशित प्रसिद्ध मासिक-पत्र में मि० वेलॉक के कई विद्वत्ता-पूर्ण सुन्दर लेखों का अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। प्रस्तुत लेख उसी में से लिया गया है। मि० वेलॉक ने स्विट्ज़रलैंड की कई बार यात्रा की है। वहाँ के रहन सहन और स्वभाव की उन्होंने जो जानकारी प्राप्त की है उसका यहाँ सजीव वर्णन किया गया है।]

स्विट्ज़रलैंड योरप का सब से छोटा देश है। इतना ही नहीं, यह संसार का भी सब से छोटा देश है। फिर भी स्विट्ज़रलैंड के नाम से ही एक प्रकार की स्थिरता, एक प्रकार की सुरक्षा का बोध होता है। स्विट्ज़रलैंड का सम्पूर्ण देश एक पहाड़ी भूभाग है। शायद यही कारण है कि योरप के अन्य देशों ने इसे चुपचाप छोड़ रखा है। इसके अतिरिक्त यह बात भी है कि पहाड़ की गोद में पले हुए लोग कुछ स्वभाव से ही स्वतन्त्रता-प्रिय होते हैं और जब कभी वे चिढ़ जाते हैं तब जान पर खेलने के लिए तैयार हो जाते हैं।

फि, फ्रेंच या जर्मन का एक अक्षर भी जाने बिना एक सिरे दूसरे सिरे तक बिना किसी दिक्कत के यात्रा कर सकता है। देसे अँगरेजों को जानता हूँ जो इस इरादे से स्विट्ज़रलैंड दाते हैं कि वहाँ उन्हें अपनी जर्मन या फ्रेंच भाषा का अभ्यास ढ़ाने का अवसर मिलेगा। मगर ऐसे व्यक्तियों को सदा निराशा ही होती है; क्योंकि यदि वे कोई बात जर्मन या फ्रेंच में पूछते हैं तो उसी क्षण उन्हें अँगरेज़ी में जवाब मिल जाता है। इससे यह बात प्रत्यक्ष हो जाती है कि स्विस लोग कैसे पक्के आतिथेय हैं और विदेशियों के लिए स्विट्ज़रलैंड की यात्रा सुविधा-जनक बनाने में वे क्या-क्या कर सकते हैं।

भोजन की व्यवस्था में स्विस लोग बड़े दक्ष हैं। उनका भोजन सादा, पुष्टिकारक और परिमाण में काफ़ी होता है। उनके देश में आनेवाले अधिकांश यात्री पैदल बहुत घूमा-फिरा करते हैं। इसलिए उन्हें भूख ख़ूब लगती है और होटल में उन्हें पुष्टिकर भोजन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त भी हो जाता है। स्विस होटलों में बड़ी अच्छी कॉफी, जिसमें बढ़िया ताज़ा दूध बहुतायत से होता है, मिलती है। यह होटल विलासपूर्ण कम होते हैं। वे साफ़-सुथरे और आरामदेह होते हैं। वहाँ होटलों के कमरों में क़ालीन के स्थान में लकड़ी का पालिश किया फ़र्श होता है। स्विट्ज़रलैंड में बढ़िया ख़ूबसूरत लकड़ी की बहुतायत है। अतः सुन्दर पालिशदार लकड़ी को दरी क़ालीन से ढकना बेकार है। इसके अतिरिक्त जब वहाँ के यात्री दिन भर पहाड़ों पर चढ़ते-फिरते हैं, तब वे इस योग्य नहीं होते कि सजे हुए बैठक खानों में संभल कर चल फिर सकें।

है इसलिए पूरे [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible] आवश्यक [illegible] है। मनुष्यों के [illegible] [illegible] है [illegible] दिखाई [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible] साथ ही साथ [illegible] और [illegible] [illegible] के [illegible] है।

यहाँ हमें अनेक आवश्यकताओं का प्रत्यक्ष सामना करना पड़ता है। यहाँ के लोग ज़्यादातर गड़रियों और चरवाहों का पेशा करते हैं। और वे पेशा न भी करें, तो कोई रोज़गार नहीं कर सकते हैं? [illegible] [illegible] है कि जैसे-जैसे उनका [illegible] बढ़ता जाता है, वे ऋतु-परिवर्तन के साथ स्थानों को बदलते जाते हैं। वे एक पहाड़ से दूसरे पर जाकर उनका ढलानों में जीविकोपार्जन की कोशिश करते हैं। जब कोई इन दुर्गम ऊँचाइयों पर चढ़कर इन ढोरों और गायों का पास से निरीक्षण करता है तब उसका आश्चर्य और भी बढ़ जाता है। यहां के लोग बड़े ही दरिद्र हैं। इनकी झोपड़ियाँ बड़ी बुरी दशा में होती हैं। इनमें फर्नीचर बहुत थोड़ा होता है, या होता ही नहीं, और इनके रहनेवाले प्रायः बेज़बान होते हैं। यहाँ के जीवन का अधिकांश लगभग पशुओं के जीवन की बराबरी का है।

चारों ओर के दृश्यों को देखकर इस बात पर आश्चर्य होता है कि मनुष्य ने पृथ्वी से जीविकोपार्जन के लिए कैसी-कैसी कौशलपूर्ण चेष्टाएँ की हैं। अधिक ऊँचाई पर भी अनाज पैदा किया जाता है। प्रकृति के बहाव पर जहाँ कहीं भी कोई हरा टुकड़ा दिखाई देता है, फौरन ही सावधानी से उसकी देखभाल की जाती है, और उसमें क्या उत्पन्न किया जा सकता है, इस

टीन के कनस्टरों में दूध अक्सर होटलों को ले जाते हुए सकते हैं। इन कनस्टरों की एक पहलू भीतर की ओर इस ग से घुसी रहती है कि वे आदमी की पीठ पर सट कर बैठ यें। स्विट्जरलैंड में चीजें पीठ पर ही ढोयी जाती हैं।

हर एक खेत के किनारे दो-चार डलियाँ पड़ी दिखायी पड़ेंगी। न डलियों का मुँह चौड़ा और पेंदी संकरी होती है, तथा वे सी बनी रहती हैं, जो पीठ पर ठीक बैठ जायें। उनमें बाँधने के लिए तस्मे लगे रहते हैं। उपज का अधिकांश भाग इन्हीं डलियों में घर पहुँचाया जाता है। यही नहीं, बल्कि जंगल से लकड़ी तथा जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुएँ इन्हीं डलियों में लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचायी जाती हैं। सड़क इस प्रकार की है कि खेतों में खाद भी इसी पुराने ढंग से पहुँचायी जाती है।

ये किसान प्रायः पूर्णतः स्वात्मावलम्बी होते हैं। ये स्वयं अपने खाद्य पदार्थ उत्पन्न करते हैं और उन्हें बहुत कम बेचते हैं; केवल इतना बेचते हैं, जिससे ये कुछ अत्यन्त आवश्यक कपड़े, सो भी बहुत रद्दी मेल के, खरीद सकें। अपनी आमदनी बढ़ाने के लिये ये जाड़ों में लकड़ी के खिलौने और छोटी छोटी चीजें बनाया करते हैं, जिन पर बढ़िया खुदाई का काम रहता है। इन चीजों को या तो वे मौसमी यात्रियों के हाथ बेच लेते हैं, या अक्सर दुकानदारों को बेचते हैं। साधारणतः ये चीजें बहुत सस्ती बिकती हैं।

जाड़े में अधिकांश पहाड़ों और घाटियों में बर्फ जम जाती है। उस समय किसानों को सड़क की बर्फ हटाने और बकरियों

और मवेशियों की देखभाल करने के सिवा और कोई विशेष काम नहीं रहता।

गरमियों में इन स्थानों में धूप और पानी का बाहुल्य रहता है। इसलिए देश के प्रत्येक भाग में अनेक प्रकार के फल और नाना प्रकार की 'बेरियाँ' (जैसे रसबेरी, स्ट्राबेरी आदि) उत्पन्न होती हैं; साथ ही शहद के छत्ते भी प्रचुरता से मिलते हैं। फल यह होता है कि किसान जाड़ों के लिए बहुत से फलों का अचार, मुरब्बा आदि बनाकर सुरक्षित करके रखते हैं। इन्हीं फलों से वे घर में शराब भी बहुत बनाते हैं।

परन्तु इन सब बातों के देखते हुए भी स्विस किसानों का जीवन बहुत कठोर है। हाँ, जब किसानों को नीचे की विस्तृत घाटियों में भूमि आदि मिल जाती हैं, तब उनके जीवन का सुख बढ़ जाता है। इस नीची भूमि में घास, अनाज और तरकारियों की अच्छी फसलें तथा अनेक प्रकार के फल पैदा होते हैं। देश के दक्षिणी भाग में अंगूर काफी परिमाण में पैदा होता है। यह वहाँ की मूल्यवान उपज है। मगर छुट्टी का आनन्द लेने के लिए स्विट्जरलैंड जानेवालों को वहाँ की असली स्थिति की कठोरता पूरी तरह नहीं ज्ञात पड़ता। वे सिर्फ मजा लूटने के लिये ही आते हैं। अतः वे अपने चारों ओर के दृश्यों को देखकर कल्पना की ज्योति में मग्न हो जाते हैं। जब वे अपनी पीठ पर अपने खाने के सामान का झोला लादे हुए इन छोटे-छोटे खेतों और टेकियों पर बनी हुई झोपड़ियों को ऊँचाई से देखते हैं, तब मन में सोचते हैं कि इन 'आदर्श' झोपड़ियों में रहना कैसा आनन्ददायक होगा। जब वे पेड़ों से ढके हुए ढलुवाँ

काल' नामक पुस्तक से यह लेख अवतरित है। इस पुस्तक में इतिहास सम्बन्धी कई से कई लेखों का समसामयिकों से अनुवाद किया गया है। इसमें यह अपने विषय का एक प्रामाणिक ग्रन्थ है। जिस प्रकार पुराने समय में कौरवों और पाण्डवों में जो भारी लड़ाई हुई थी, आपसी युद्ध हुआ था, जो अपनी दीर्घव्यापकता और भयंकरता के कारण ही 'महाभारत' कहा जाता है इसी प्रकार मुग़ल बादशाह शाहजहाँ के पुत्रों में राज्य के युद्ध ने अत्यन्त विकट रूप धारण किया था। इसमें यद्यपि औरङ्गजेब विजयी हुआ और सम्भवतः भारत सम्राट् बना, फिर भी उसके मरने का इस देश पर से मुग़ल शासन शुरू क्षीण होने लगा। यहाँ पर इस भाइयों की आपसी लड़ाई में जो कई स्थानों पर हुईं पहली लड़ाई का वर्णन किया गया है।]

मुग़लों के महाभारत का पहला संघर्ष कन्नौज से चौदह मील दक्षिण पश्चिम धर्मत नाम के स्थान पर सिप्रा नदी के तट पर हुआ। दारा ने विद्रोही भाइयों का रास्ता रोकने के लिये राजा जसवन्तसिंह को कासिमखाँ के साथ मालवा की ओर भेजा था। राजा को रवाना करते हुए शाहजहाँ ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि तुम्हारा लक्ष्य राजकुमारों को समझा बुझा या डरा कर अपने-अपने प्रान्त में वापिस भेज देना है। इस लक्ष्य की पूर्ति जिस प्रकार भी सम्भव हो, करो। उसे राजकुमारों को आगरा आने से रोकने का काम सौंपा गया था। उन्हें परास्त करने या मारने का काम नहीं। इस अप्रिय और कठिन कार्य को पूर्ण करने के लिए जसवन्तसिंह कई महीनों से मालवे में प्रतीक्षा कर रहा था। यह कार्य अप्रिय था, क्योंकि बाप

और नियम से चलाये हुए कायर भी पराजय में से विजय को निकाल सकते हैं।

युद्ध का आरम्भ गोलाबारी और बाण-वृष्टि से हुआ। आरम्भ में ही शाही सेना को अपने सेनापति की भूल से हानि उठानी पड़ी। राजा जसवन्तसिंह ने युद्ध के लिए ऐसी भूमि चुनी थी कि उसमें फैलने का स्थान नहीं था। चारों ओर गढ़ों खाइयों और दलदलों के कारण रास्ते रुके हुए थे। उसकी सेना के दो भाग थे। बड़ा हिस्सा मुसलमान सेनाओं का था। वह दोनों ओर फैला हुआ था। शत्रु के गोले बगले और मध्य के हिस्से पर गिर कर प्रलय का-सा उत्पात मचाने लगे। राजपूत बहादुर इसे सहन न कर सके। राजपूत मरना जानते हैं; परन्तु गाजर-मूली के भाव नहीं। वह मार कर मरने में ही श्रेय समझते हैं। गोलों से भुने जाकर उनका हृदय अपमानित होने लगा। सेना के नियम, सेनापति के इशारे की प्रतीक्षा न करके राजपूतों के दल ने शत्रु विध्वंस का बोझ अपने कंधों पर लिया। 'राम', 'राम' के सिंहनाद से आकाश को गुंजाता हुआ वह केसरिया दल पावस के मेघ की तरह उमड़ कर शत्रु-दल के तोपखाने पर टूट पड़ा। तोपचियों ने तोप के गोले दागे और बन्दूकचियों ने बन्दूकें छोड़ीं; परन्तु जान पर खेलने वाले उन पुरुष सिंहों के रोकने की शक्ति किसी में न थी। तोपची तोप छोड़ भागा और बन्दूकची की बन्दूक गिर गयी। उस झपाटे में जो आया वह मारा गया। बवंडर की तरह उमड़ता हुआ वह राजपूत घुड़सवारों का दल आन की आन में तोपखाने से पार हो गया। तोपखाने का सेनापति मुर्शिद-कुली खाँ मारा गया, और भी बहुत से कारीगर धराशायी हुए।

कि वह वीर राजपूतों का निरोध [illegible] गया।
राजपूत फिर भी युद्ध करे, एक एक ने कई कई को मारा परन्तु
कहाँ तक। चारों ओर से घिरकर [illegible] कि वह पराजय
की तरह मरे, और हो ही क्या सकता था? इतना असाधारण,
वीरता दिखा कर, [illegible] ऐसा चमत्कार दिखा कर वह
[illegible] दल केवल लाशों का ढेर रह गया। इसका कारण था, उसके
सेनापति की अयोग्यता। पहले तो राजा जसवन्तसिंह उन्हें
आगे बढ़ने से रोक न सका, और जब वह आगे बढ़ गये तब
उनकी सहायता के लिए, उनकी सफलता से लाभ उठाने के लिए
कुमक भेजने में असमर्थ हुआ। परिणाम यह हुआ कि शाही
सेना का सबसे आवश्यक भाग क्षण भर का चमत्कार दिखला-
कर बिना तेल के दीपक की भाँति बुझ गया।

पाठ-सहायक

संघर्ष = युद्ध। तट = किनारा। विजय श्री = विजय लक्ष्मी, जीत। पराजय = हार। [illegible] = [illegible]। ममता = मोह। इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः = यहाँ भी बरबाद और वहाँ भी।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ:—लक्ष्य, दुष्कर, कटिबद्ध, श्रेय, धराशायी, अपमान, अयोग्यता।

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—शिकार बनना, स्वर्णिम, उन्माद मचाना, गाजर-मूली की तरह कटना, आन की आन में, आग के परकाले, हाथ धोना।

लक्ष्मण के हाथों मारा गया । इस समाचार को सुनते ही रावण मूर्छित हो गया । रनिवास में हाहाकार मच गया । रावण ही इस अनुचित दुर्घटना का कारण था । इससे सबको सभी धिक्कारने लगे । रावण ने इन्हें समझा-बुझाकर शान्त किया । किसी तरह रात बीती । सबेरा होते ही फिर युद्ध छिड़ गया । इसी का वर्णन नीचे दिया गया है ।]

निसा सिरानि भयउ भिनुसारा, लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा ।
सुभट बोलाइ दसानन बोला, रन-सनमुख जा कर मन डोला ॥
सो अबहीं बरु जाउ पराई, संजुग-बिमुख भये न भलाई ।
निज भुज-बल मैं बैर बढ़ावा, देहउँ उतर जो रिपु चढ़ि आवा ॥
अस कहि मरुत बेग रथ साजा, बाजे सकल जुझाऊ बाजा ।
चलेउ निसाचर-कटक अपारा, चतुरंगिनी अनी बहु धारा ॥
बिबिध भाँति बाहन रथ जाना, बिपुल बरन पताक ध्वज नाना ।
चले मत्त गज-जूथ घनेरे, प्राविट-जलद मरुत जनु प्रेरे ॥
बरन बरन बिरदैत निकाया, समर सूर जानहिं बहु माया ।
अति बिचित्र बाहिनी बिराजी, बीर बसंत सेन जनु साजी ॥
चलत कटकु दिग-सिंधुर डगहीं, छुभित पयोधि, कुधर डगमगहीं ।
उठी रेनु रबि गयउ छपाई, पवन थकित बसुधा अकुलाई ॥
पनव निसान घोर रव बाजहिं, महा प्रलय के घन जनु गाजहिं ।
भेरि नफीरि बाज सहनाई, मारू राग सुभट सुखदाई ॥
केहरि नाद बीर सब करहीं, निज निज बल पौरुष उच्चरहीं ।
कहइ दसानन सुनहु सुभट्टा, मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा ॥
हौं मारिहउँ भूप दोउ भाई, अस कहि सन्मुख फौज रेंगाई ।
यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई, धाये करि रघुबीर दोहाई ॥

दो०—राम बचन सुनि बिहँसि कह, मोहि सिखावत ग्यान।
बैर करत नहिं तब डरहु, अब लागे प्रिय प्रान॥

कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर, कुलिस-समान लाग छाँड़ै सर।
नानाकार सिलीमुख धाये, दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाये॥
अनल-बान छाँड़ेउ रघुराया, छन महँ जरे निसाचर माया।
छाँड़ेसि तीव्र सक्ति खिसियाई, बान-संग प्रभु फेरि पठाई॥
कोटिन चक्र, त्रिसूल पबारइ, बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारइ।
निफल होहिं रावन सर कैसे, खल के सकल मनोरथ जैसे॥
तब सत-बान सारथी मारेसि, परेसि भूमि जय राम पुकारेसि।
राम कृपा करि सूत उठावा, तब प्रभु परम क्रोध कहँ पाया॥

दो०—तानि सरासन स्रवन लगि, छाँड़े बिसिख कराल।
राम बान मारग चले, लहलहात जनु ब्याल॥

चले बान सपच्छ जनु उरगा, प्रथमहि हतेउ सारथी तुरगा।
रथ विभंजि हति केतु पताका, गर्जा अति अंतर बल थाका॥
तुरत आन रथ चढ़ि खिसियाना, छाँड़ेसि अस्त्र शस्त्र विधि नाना।
विफल होहिं सब उद्यम ताके, जिमि पर-द्रोह-निरत-मनसा के॥
तब रावन दस सूल चलाये, बाजि चारि महि मारि गिराये।
तुरग उठाइ कोपि रघुनायक, खैंचि सरासन छाँड़े सायक॥
रावन सिर-सरोज-बन-चारी, चलि रघुबीर सिलीमुख धारी।
दस दस बान भाल दस मारे, निसरि गये चले रुधिर पनारे॥
स्रवत रुधिर धायउ बलवाना, प्रभु पुनि कृत धनु सर संधाना।
तीस तीर रघुबीर पबारे, भुजन्ह समेत सीस महि पारे॥
काटत ही पुनि भये नवीने, राम बहोरि भुजा-सिर छीने।

छन्द = [illegible] । [illegible] अर्थ – [illegible]

[illegible], हाथी सवार और [illegible] हैं ।

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ:—सुभट, संयुग, भट, त्रिपुर, शार्ङ्ग, पयोद, सौमित्र, सुरपति, मातलि, संयुग, त्रिलोचन, मङ्गलदाता, पवनसुत।

२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—जुझाऊ बाजा बजाना, मन-मन [illegible], काल हवाले करना, प्रशंसा, मनुसाई।

३. रावण ने युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व अपने सैनिकों से क्या कहा था? दोनों दलों के योद्धा किस-किस प्रकार से युद्ध-स्थल में आ डटे थे?

४. युद्धस्थल में राम को कहाँ से रथ मिला था? रावण ने क्या कहकर राम को उत्तेजित किया था?

५. राम-रावण युद्ध का वर्णन करो।

६. निम्नलिखित शब्दों में समास बतलाओ—रन-सनमुख, संयुग-विमुख, गज-पुंज, निसाचर-अनी, खरदूषन-कबन्ध, मन-यान, पर-द्रोह-निरत-मनसा, त्रिलोचन, प्रनतपाल, सिर-भुज-हीन, घोर-रव, भालु-मर्कट-समुदाई।

३२—महात्मा टॉलस्टाय

[इस जीवन-चरित के लेखक पण्डित रामनारायण मिश्र हैं। इनका परिचय अन्य पाठ में दिया जा चुका है। टॉलस्टाय, जैसा इस पाठ में लिखा गया है, कहानी और उपन्यास लेखक भी थे। उनकी बहुत सी कहानियों और उपन्यासों के अनुवाद हिन्दी में भी हो गये हैं। 'टॉलस्टाय की कहानियाँ' नाम से प्रेमचंद ने, जो स्वयं हिन्दी उर्दू के प्रसिद्ध कहानी-लेखक थे, उनकी कई कहानियाँ हिन्दी की भेंट की हैं। अन्ना, पुनर्जागृति आदि उपन्यास भी उन्हीं की रचनाओं के अनुवाद हैं।]

टॉलस्टाय रूस देश के निवासी थे। पृथ्वी पर जितने निर्बल देश हैं, उन सभी से टॉलस्टाय की सहानुभूति रहती थी। उनका ध्यान मनुष्य की उन्नति के केवल एक ही पक्ष पर नहीं रहता था। वे धर्म-निरीक्षक, समाज-संशोधक, राजनीतिज्ञ, योद्धा और तत्ववेत्ता थे। अपने विचारों को उपन्यास और अन्य प्रकार के निबन्धों द्वारा प्रकाशित करते थे, और उन विचारों पर स्वयं भी चलते थे। ऐसा करने में उन्हें अनेक कष्ट हुए। उनके कुटुम्बी उनसे अप्रसन्न रहते थे। राजा के क्रोध का कभी-कभी सामना करना पड़ता था; पर दृढ़-प्रतिज्ञ टॉलस्टाय अपने सिद्धान्तों से विचलित न हुए। ऐसे महानुभाव का जीवन-वृत्तान्त मनुष्य-मात्र के लिए शिक्षाप्रद है—विशेषकर हमारे देश के लिए, जो प्रायः उन्हीं दुःखों से पीड़ित हैं, जिनके दूर करने के लिए इस महात्मा ने अपना तन-मन-धन लगाया था।

टॉलस्टाय का जन्म सम्वत् १८८५ विक्रमी में, रूस का

ई आरम्भ किया। इसी समय क्रीमिया का महायुद्ध आरम्भ हुआ। उन्होंने अपने देश की ओर से बिना वेतन स्वेच्छासैनिक होकर लड़ना आरम्भ किया। लड़ने में इन्होंने इतनी वीरता दिखलाई कि सैबेस्टोपोल के पहाड़ी गढ़ की सेना के सेनापति हो गये। इसी स्थान पर इन्होंने सैबेस्टोपोल की लड़ाई की कहानियाँ लिखीं।

टॉलस्टाय के जीवन के आदर्श को ग्रन्थों ने बदल दिया। टॉलस्टाय ने जो पुस्तकें लिखी हैं, उन पर रूसो के उपदेशों का स्पष्ट प्रभाव मालूम पड़ता है। उन दिनों रूस देश में गुलामी की प्रथा थी। जमींदार काश्तकारों से बेगारी का काम लेते थे। काम के बदले में कुछ वेतन नहीं देते थे। इस दुर्दशा को टॉलस्टाय ने देश के लिए हानिकारक समझा। उन्होंने इसी विषय पर उपन्यास लिखने आरम्भ किये। स्वयं अपनी जमींदारी में कृषकों से सुन्दर व्यवहार आरम्भ किया। उनके लिए पाठ-शालाएँ खोलीं। स्वयं उन्होंने इंजील का गाना, इतिहास इत्यादि पढ़ाना आरम्भ किया।

टॉलस्टाय का मत था कि प्रत्येक बालक, चाहे वह किसी जाति का हो, शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी है। राजा और धनाढ्य लोगों का कर्तव्य है कि वे हर जाति के बालकों की शिक्षा का प्रबन्ध करें। मनुष्य-मात्र के लिए जैसे नग्न अवस्था को ढकने के लिए वस्त्र की आवश्यकता है, वैसे ही अपनी अज्ञता को दूर करने के लिए विद्या की आवश्यकता है। परन्तु अपने मत के प्रचार में वे अकेले ही थे। लाचार होकर उनको अपने खोले हुए स्कूल बन्द करने पड़े।

इस समय उन्होंने जो उपन्यास लिखे, वे इसी मत का

और उनके कुटुम्बी मिलकर दोनों का अपने हाथ से सिखाते
वस्त्र पहनाते थे। अपनी जमींदारी का सारा काम
ने ग़रीबों को अर्पण करना आरम्भ किया। स्वयं भी वहीं
इन करने को किसानों का सिखाते। टॉलस्टाय के धार्मिक
व का उत्तरस्वरूप से प्रादुर्भाव तब होता था, जब वे दुःखपीड़ित,
दलित लोगों को देखते थे। इस समय उनके चित्त में ऐसे
गों के लिये दया, और जिनके कारण संसार में दुःख, पीड़ा
र अन्याय फैलते हैं, उनके लिए अत्यन्त क्रोध उत्पन्न होता
। ऐसे धार्मिक भावों का वर्णन करने में टॉलस्टाय की लेखनी
ड़ी प्रभावशालिनी हो जाती थी। उनके वाक्य अद्भुत आदर्शों
का परिचय देते थे।

अब टॉलस्टाय के चित्त में वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करने
की इच्छा हुई। परन्तु इसमें कई कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं।
घरवालों का झगड़ा, लोगों का निश्चत करना और समझाना कि
घर बैठे ही संसार त्यागा जा सकता है, फिर इसकी आवश्यकता
क्या है, इत्यादि। इस समय का लिखा हुआ एक पत्र, जो इन्होंने
अपनी स्त्री के नाम से लिखा था, अब प्रकाशित किया गया है। उसमें
इन्होंने अन्य वाक्यों के अतिरिक्त यह वाक्य लिखा है—"मुख्य
बात यह है कि प्राचीन आर्यों की नाईं जो ६० वर्ष की अवस्था होने
पर जंगल में चले जाते थे और सच्चे धार्मिक पुरुषों के समान
अपना अन्तिम समय ईश्वर की आराधना में बिताते थे, न कि
खेल और रागों में, मेरी भी इस ८० वर्ष की अवस्था में यह
प्रबल इच्छा है कि मुझे शान्ति प्राप्त हो, एकान्त मिले और मेरे
जीवन के कार्य और मेरे विश्वास में एकता हो।" कई वर्षों के

१. इन शब्दों और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:— अनुपम सूचना ईश्वरभजन, परिश्रम, देश, बाल्यावस्था, ईश्वर की आराधना सहानुभूति प्रकट करना, चक्र चलना।
२. टॉलस्टाय का जन्म कब और कहाँ हुआ? बाल्यपन में वे आमोद-प्रमोद क्यों पसन्द करते थे?
३. इनमें कौन-कौन व्यसन थे जिनके कारण वे अधिक शिक्षा नहीं प्राप्त कर सके थे?
४. टॉलस्टाय का जीवन किन कारणों से परिवर्तित हो गया? और संसार के अन्य मनुष्यों के साथ उन्होंने कैसा व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया?
५. विवाह के पश्चात् इन्होंने अपना जीवनक्रम किस प्रकार से निभाया? और घर क्यों छोड़ दिया?
● मरते समय टॉलस्टाय ने अपने घर वालों से क्या कहा था?
८. इस पाठ में आये हुए तत्पुरुष और बहुव्रीहि समास अलग करो।

३२—वीर बालक पत्ता

[इस कविता के रचयिता बाबू सियाराम शरण गुप्त हिन्दी के यशस्वी कवि बाबू मैथिलीशरण गुप्त के अनुज हैं। उनका जन्म चिरगाँव (ज़िला झाँसी) में भाद्रपद शुक्ला पूर्णिमा, सम्वत् १९५२ को हुआ। गुप्तजी करुणरस की कविता लिखने में विशेष प्रवीण हैं। आपने कविता के अतिरिक्त कहानी, उपन्यास और नाटक की भी रचना की है। मौर्य विजय, अनाथ और आत्मोत्सर्ग आपके खण्ड-काव्य हैं और विषाद,

आशीर्वाद दीजिये हे माँ, करने का संदेश का प्राण:
विचलित होऊँ नहीं युद्ध में निकल जायँ चाहे ये प्राण ॥'
न्य वीर बालक प्रताप का सुनकर यह अति शुभ विचार ।
माँ का कण्ठ हो गया गद्गद करके प्राप्त प्रमोद अपार ॥

अपने एकमात्र प्रिय सुत को क्षत्रिय-गौरव के रक्षार्थ ।
रण में जाने को माँ ने यों दिया निदेश त्यागकर स्वार्थ—
"ईश्वर मङ्गल करें तुम्हारा, जाओ रण में वत्स, सहर्ष ।
वही काम करना तुम जिसमें मातृभूमि का हो उत्कर्ष ॥

अपने इस अति विमल वंश के तुम्हीं एक हो प्राणाधार ।
तुम्हें भेजते हुए युद्ध में होती चिन्ता मुझे अपार ॥
फिर भी निज कर्तव्य जानकर देती हूँ तुमको आदेश ।
पुत्र कहीं लग जाय न कुल में थोड़ा भी कलङ्क का लेश ॥

मातृभूमि के लिए तुम्हारे पिता कर चुके आत्मोत्सर्ग ।
तुम भी इसी मार्ग पर जाकर करना प्राप्त कीर्तिमय स्वर्ग ॥
हे सुत, तेरी वृद्धा माता यही चाहती है सविशेष ।
तेरे होते हुए न खोवे मातृभूमि निज कीर्ति अशेष ॥'

सुन प्रताप यों बोला मानों बरसाकर श्रुति-सुधा-पुनीत,
"हे माँ, मेरे जीवित रहते कौन दुर्ग सकता है जीत ?
राजपूत होकर माँ मैं क्यों नहीं कर सकूँगा यह कार्य,
करते हैं सदैव ही जिसको बल-विक्रम-शाली हम आर्य।

माँ के पदपद्मों को छूकर धारण कर उल्लास अनन्त
घोर-वेग से निकल वहाँ से पहुँचा वह रण मध्य तुरन्त ।

निज सेना की दशा देख यह कातर विचलित हुआ विशेष ।
करने लगा उसे उत्साहित देकर बढ़ने का आदेश ॥
उसकी उत्तेजक बातों से हुए मुग़ल चञ्चलता हीन ।
फिर भी चार राजपूतों का होने लगा वेग कुछ क्षीण ॥

इसी समय कुछ वीर नारियाँ धारण कर कठोर रण-वर्म ।
दुर्गस्थित हो मानो पैठने रिपुओं की सेना के मर्म ॥
करतीं थीं जो रण-कौशल से अरिगण का मद गर्व विलुप्त ।
थी उनमें प्रताप की माता, वधू और पुत्री संयुक्त ॥

वीर गीत गाकर वे मन से करके प्राण मोह का त्याग ।
अपनी अतिशय प्रबल शक्ति को करने लगीं वहाँ पर व्यक्त ॥
माता, बहन तथा पत्नी को वीरवेश में वहाँ निहार ।
पाने लगा प्रताप और भी हृदय बीच आनन्द अपार ॥

थी यद्यपि मुग़लों की सेना अति विस्तृत घन-घटा-समान ।
थी यद्यपि वह उपकरणों से सभी भाँति अतिशय बलवान ॥
पर उन वीर-नारियों द्वारा पीड़ित होकर बारंबार ।
विचलित वह हो उठी वहाँ फिर मानों मृत्यु समक्ष निहार ॥

उनका यह वीरत्व देखकर अकबर क्षुब्ध हुआ अत्यन्त ।
उसने यह अपनी सेना में सब पर प्रकटित किया तुरन्त—
"जो कोई ये तीन नारियाँ जीवित पकड़ लायेगा आज ।
जहाँपनाह उसे देवेंगे मनमाना धन दौलत राज" ॥

पर उस समय हो रहे थे सब लज्जा से उन्मत्त समान ।
बादशाह की इस वाञ्छा पर दिया किसी ने जरा न ध्यान ॥

क्षत्रिय सब उनके समान थे करने में गम्भीर विचार ।
मातृभूमि पर मर जाने को प्रस्तुत थे वे सभी प्रकार ॥
उन्हें नहीं था मोह किसी का, था तो मातृभूमि का मोह ।
उन्हें मृत्यु का शोक नहीं था, होता हाय ! स्वदेश-विछोह ॥
आखिर वह अतिमानव दुर्दिन आ पहुँचा होगया निरान्त ।
रिपुओं से भिड़ जाने को वे उत्कण्ठित हो उठे नितान्त ॥
"मातृभूमि के लिए मरेंगे" यद्यपि उन्हें था इसका हर्ष ।
उसकी भावी दशा सोचकर थे परन्तु वे कम न विमर्ष ॥
सागर की लहरों-सी बढ़कर वह मुगलों की सैन्य अशेष ।
हाय ! हाय ! चित्तौड़-दुर्ग में साभिमान कर उठी प्रवेश ॥
रोका उसे राजपूतों ने झपटा वहाँ सानन्द ।
छक्के छुड़ा दिये रिपुओं के दिखलाकर धीरत्व अमन्द ॥
अति उत्साह समेत वहाँ फिर होने लगा घोर संग्राम ।
कितने ही जन चिर-निद्रित हो लेने लगे विपुल विश्राम ॥
गिरि से टकराकर ज्यों पीछे हट जाता है जल-प्रवाह ।
पीछे हटने लगा उसी विधि रिपुसमूह हो मन्दोत्साह ॥

पाठ-सहायक

सैन्य = सेना । बल-वीर्य-निकेत = शक्ति का भवन, अत्यन्त बलवान । पुनीत = पवित्र ।
उद्यत = तैयार । त्राण = रक्षा । निदेश = आज्ञा ।
रिपुओं = शत्रुओं । निधनार्थ = मारने के लिए ।

अभ्यास

1. शब्दार्थ बतलाओ—निपात, अभिघात, आत्मोत्सर्ग, उल्लास, तीक्ष्ण, अगणित, सर्ग, रणधर्म, उपकरण, निशान्त ।

रवाना हुई। सबसे प्रथम एक आधार-धाम बनाया गया, जहाँ पर भोजन, डेरा तथा अन्य सामान जैसे-जैसे आता जाता था रक्खा जाता था। यह कैम्प १६,५०० फुट की ऊँचाई पर था। फिर कुछ भारतीय कुलियों की सहायता से चार और कैम्प पहाड़ के ऊपर थोड़ी-थोड़ी दूरी से बनाये गये। चौथा कैम्प २३,००० फुट की ऊँचाई पर था। यहाँ से चार अँगरेज़ और नौ भारतीय कुली ऊपर इसलिए चढ़ने लगे कि पाँचवाँ कैम्प स्थापित करें और यदि सम्भव हो तो पर्वत की चोटी पर पहुँच जायें।

सब लोग रवाना होने से पूर्व सन्ध्या को बड़े प्रसन्न थे; पर प्रातःकाल होने पर ज्ञात हुआ कि चार कुली पहाड़ी रोग से पीड़ित हैं। यह रोग अधिक ऊँचाई पर चढ़ने से इसलिए हो जाता है कि वहाँ पर वायु बहुत पतली हो जाती है, इसलिए जितनी देर में हम एक बार साँस भूमि पर लेते हैं, ऊँचाई पर दो चार अथवा उससे अधिक लेनी पड़ती है। यह रोग बड़ा भयङ्कर होता है। सौभाग्य से शेष कुली आगे बढ़ने के योग्य थे; पर उन लोगों को भी शीतल और तेज़ वायु के बुरे प्रभाव का अनुभव होने लगा। अन्त में भगीरथ-प्रयत्न करने के पश्चात सब लोगों को कोई शरण-स्थान देखने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इसलिए उन्होंने दो डेरे खड़े किये। भारतीय कुलियों को तो कैम्प संख्या ४ पर लौटा दिया और चारों अँगरेज़ आगे बढ़ने के लिए वहीं पड़े रहे।

प्रातःकाल उन चारों में से भी एक कुछ अस्वस्थ हो गया। इसलिए उसको वहीं छोड़ा और तीनों मनुष्य यात्रा के लिये चल पड़े। उनके चारों ओर की भूमि रात्रि को गिरे हुए हिम से ढकी हुई थी, जिसके अन्तःस्थल में पत्थर तथा गड्ढे छिपे हुए थे।

का प्रबन्ध किया । पर श्वास के कारण उनका गला सूख गया इसलिए बिना कुछ जल आदि पिये ठोस भोजन उनके गले में उतरता न था । दैवयोग से वहाँ कोई साधन अग्नि प्रज्वलित करने का भी न था, जिससे हिम गलाया जाता । इसलिए उन्होंने कुछ मदिरा, कुछ हिम और कुछ जमे हुए दूध को पेटकर और उसे चाटकर अपनी श्वास-श्वास शान्त की और सोने के लिए अपने चर्म-थैलों में घुस गये ।

ये लोग प्रातःकाल कैम्प नं० ३ पर पहुँचे । इसी समय उनके साथियों की दूसरी मण्डली भी चढ़ने के लिए अग्रसर हुई । अब की बार जो यात्रा करनेवाले थे उनके पास एक प्रकार का यन्त्र था जो प्रत्येक मनुष्य की पीठ पर था । इसमें ऑक्सिजन अथवा प्राणप्रद वायु भरी थी । उस यन्त्र से एक नली निकल कर प्रति मनुष्य के नाक के पास आती थी, जिससे चढ़नेवाले को पतली वायु से कोई हानि नहीं पहुँची थी, क्योंकि ऊपर की पतली वायु में ऑक्सिजन की जो कमी रहती थी, वह इस रबर की नली से निकली हुई वायु द्वारा पूर्ण हो जाती थी ।

इस चढ़ाई में दो अंग्रेज और एक गुरखा था, जिसका नाम तेजबीर था । कैम्प-नं० ४ से चलने के पश्चात् वे लोग कुछ ऊपर चढ़े । मार्ग में ही रात्रि हो गयी, इसलिए उन्होंने एक डेरा खड़ा किया और विश्राम करने लगे । क्योंकि कैम्प नं० ४ को लौट जाना अब व्यर्थ था । परन्तु उनको विश्राम कहाँ ? रात्रि बड़ी भयङ्कर थी । सूर्यास्त के पश्चात् ही आँधी तेज होने लगी और उसके साथ-साथ हिम की बौछार भी होने लगी । हिम के सूक्ष्म कण डेरे के छिद्रों में होकर आते थे, जिनके कारण उन

ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ते जाते थे त्यों-त्यों हिम भी गहरा होता जाता था। पग-पग पर वे हिम में घुटने तक गड़ जाते थे। अब वे ढालू मार्ग पर चढ़ रहे थे कि सहसा बर्फ नीचे की ओर खिसकने लगी और वे लोग भी उसके साथ-साथ नीचे गिरने लगे। तीनों अंगरेज और एक कुली, जो सबसे आगे थे, एक रस्सी से बँधे हुए थे। जो बर्फ उनको नीचे ढकेले लिये जा रही थी भाग्यवश ठहर गयी और उन लोगों के पाँव जम गये। पर और कुली कहाँ थे? उन्होंने देखा कि १५० फीट नीचे ४ कुली और भी फिसल जाने के कारण गिर पड़े थे और जीवित थे। शेष पाँच हिम में दब गये थे। अब प्रश्न यह था कि हिम में दबे हुए मनुष्यों को किस प्रकार निकाला जाय? नीचे उतर कर इन लोगों ने जल्दी-जल्दी बर्फ को हाथ से तथा फावड़े से हटाया। एक मनुष्य के ऊपर से बर्फ हटायी गयी। वह अभी साँस ले रहा था, दूसरा मनुष्य और निकाला गया। उसमें भी जीवन शेष था, एक और कुली मरा हुआ निकाला गया। और शेष कुली इतने नीचे दब गये थे कि उनका निकालना इन लोगों की सामर्थ्य से बाहर था।

इस घटना से सारी मण्डली के उत्साह पर पानी पड़ गया। सबके चेहरों पर विषाद छा गया। अब उन्होंने लौट जाने ही में कुशल समझी। इसलिए जैसे-तैसे वे लोग कैम्प नं० ३ में लौट आये। इस दुर्घटना का प्रभाव ऐसा पड़ा कि उस वर्ष हिमालय पर चढ़ने का और कोई प्रयत्न नहीं किया गया। जो लोग मृत्यु को प्राप्त हो गये थे उनके स्मारक-स्वरूप वहाँ पत्थर का एक बड़ा चबूतरा बना दिया गया।

मनुष्य मैलोरी और महाशय इर्विन आगर दो सज्जन चढ़ने के लिए तैयार हुए। इनमें से मि० इर्विन की आयु कुछ अधिक न थी। वे अपने साथ ६ कुली ले गये जो अपने ऊपर ऑक्सीजन लादे हुए थे। ये लोग सबसे ऊँचे कैम्प पर पहुँचे। एक एक करके चारों कुली लौटा दिये गये। अन्तिम कुली महाशय मैलोरी से यह समाचार लाया कि "हम लोग अच्छी तरह से हैं और मौसम ठीक है।" वे लोग इस रात को कैम्प नं० ६ में सोये और दूसरे दिन प्रातःकाल रवाना हुए।

प्रातःकाल का समय बहुत सुन्दर और निर्मल था। जो लोग नीचे के कैम्प में थे, उनको पूर्ण आशा थी कि दोनों वीर सबसे ऊँची चोटी के सिरे पर पहुँच जायेंगे और अपनी सुकीर्ति को अमर बनायेंगे। पर उनके भाग्य में कुछ और ही बदा था। दोपहर के समय एक और सज्जन ने जो कैम्प नं० ६ की ओर जा रहा था देखा कि चोटी से लगभग ४०० फीट नीचे बर्फ पर एक छोटा-सा धब्बा था। यह काला धब्बा चलने लगा और दूसरा काला धब्बा भी चला और पहले धब्बे के पास आ गया। इसमें कोई सन्देह नहीं था कि ये दोनों काले धब्बे दोनों वीर यात्री थे।

वह मनुष्य कैम्प नं० ६ में गया। उसे आशा थी कि सन्ध्या होते होते दोनों यात्री लौट आवेंगे। जो उनको सहायता की आवश्यकता होगी वह उनको देगा। पर रात्रि व्यतीत हो गयी और उनका पता नहीं था। दूसरा दिन हुआ, उसने सीटी दी, चिल्लाया पर किसी प्रकार का शब्द नहीं सुनायी दिया। फिर वह नीचे के कैम्पों में कुछ सामग्री लेने को लौट आया और दो दिन के पश्चात्

अभ्यास

१. शब्दार्थ बतलाओ:—अनुसन्धान, भगीरथ-प्रयत्न, लक्ष्य, अग्रसर, परिवर्तन, सामग्री, स्पर्धा।
२. अर्थ बतलाओ और अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—टेढ़ी खीर, टटोलना, चकनाचूर हो जाना, उत्साह पर पानी पड़ जाना, विजय प्राप्त करना।
३. हिमालय पर्वत कहाँ है? उससे भारतवर्ष को क्या लाभ पहुँचता है?
४. माउण्ट एवरेस्ट का पहला नाम क्या था? उसका यह नाम क्यों पड़ा?
५. हिमालय की चोटी तक पहुँचने के लिए अनुसन्धान करनेवाले कहाँ तक सफल हुए?
६. पर्वत की ऊपरी चोटी की हवा में किस बात की कमी रहती है कि वहाँ लोगों का दम घुटने लगता है?
७. वाच्यपरिवर्तन किसे कहते हैं? कर्तृवाच्य को कर्मवाच्य में बदलने के लिये क्या करना चाहिये? इस पाठ से पाँच उदाहरण देकर समझाओ।